दंसण मूलो धम्मो

आत्मधर्म

शाश्वत सुख का मार्गदर्शक मासिकपत्र

मा न स्तं भ–म हो त्स व अं क

वर्ष नववाँ
खास अंक

: संपादक :
रामजी माणेकचंद दोशी वकील

द्वितीय वैशाख
२४७९

निज शक्ति की संभाल

जीव अपनी शक्ति से परिपूर्ण है परन्तु वह अपनी संभाल नहीं करता, इसलिये पराश्रय की भीख मांग–मांगकर भटक रहा है; यदि निज–शक्ति की संभाल करे तो पराश्रय छूटकर स्वाश्रय से अल्पकाल में सिद्ध हो जाये। जो अनंत सिद्ध भगवन्त हुए, वे सब निज शक्ति की संभाल करके उसके आश्रय से ही सिद्ध हुए हैं। इसलिये हे जीव... ! ...तेरी अनंत शक्तियाँ तुझमें एक साथ भरी हैं उन्हें तू संभाल! तू ही सर्व शक्तिमान परमेश्वर हैं—ऐसा विश्वास करके उसमें अन्तर्मुख हो तो तेरी पर्याय में सर्व शक्ति प्रगट हो जाये। तेरी जितनी शक्ति है, वह सब तुझमें ही भरी है; इसलिये किसी भी पराश्रय की आशा छोड़कर अपने स्वभाव का ही आश्रय कर!

[—प्रवचन से]

वार्षिक मूल्य
तीन रुपया

१८

एक अंक
चार आना

जैन स्वाध्याय मन्दिर : सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

मुक्ति का पंथ

[ज्ञायक स्वभाव की उपासना]

शरीरादि पदार्थ जड़ हैं, उनसे आत्मा बिलकुल भिन्न है।

हिंसा, असत्य, चोरी, अब्रह्म, परिग्रहादि अशुभभाव हैं, उनसे पाप-बंधन होता है।

अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, त्याग, सेवा-पूजा-भक्ति इत्यादि शुभभाव हैं, उनसे पुण्य-बंधन होता है।

वीतरागी आत्मधर्म उन दोनों से भिन्न है; सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप वीतरागभाव वह धर्म है, उससे बंधन का नाश होता है।

आत्मा पर का ग्रहण या त्याग करे—ऐसा कोई स्वभाव उसमें नहीं है।

शुभ-अशुभ वृत्ति भी परमार्थ से आत्मा का स्वरूप नहीं है।

आत्मा के एकरूप ज्ञायक स्वभाव में अप्रमत्त और प्रमत्त ऐसे भेद भी नहीं हैं।

आत्मा तो, परद्रव्य और परभावों से भिन्न अनादि-अनंत एकाकार ज्ञायकभाव है।

ऐसा आत्मा ही समस्त अन्य द्रव्य के भावों से ''भिन्नरूप उपासित'' ''शुद्ध'' कहलाता है।

ऐसे आत्म स्वभाव की उपासना करना ही मोक्षमार्ग है।

प्रथम श्रद्धा और ज्ञान में ज्ञायकस्वभाव की उपासना, वह सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान है; और पश्चात् उसमें लीनता द्वारा उसकी उपासना, वह सम्यक् चारित्र है।

अहो ! अपने पुनीत प्रभाव द्वारा जिन्होंने अनेक मुमुक्षुओं को मोक्षमार्ग में प्रेरित किया है.... और भ्रष्ट तथा अनेक जीवों को वात्सल्यपूर्वक पुनः सन्मार्ग में दृढ़रूप से स्थापित किया है—ऐसे इन त्रिकाल मंगलस्वरूप पवित्र आत्मा पूज्य श्री कानजी स्वामी को पुनीत शरण में रहकर अपूर्व आत्मकल्याण की उपासना करते हुए मुमुक्षुजनों के हृदय आनंद से अति उल्लसित होते हैं; और उनके चरणों में मस्तक झुक जाता है।

★

हे कृपानिधि, पूज्य गुरुदेव! आप आत्मार्थी जीवों के हृदय के आराम और जीवन के आधार हो... घोर अंधकार में भटकते हुए अनेक जिज्ञासु जीवों को कल्याण मार्ग की पगडंडी आपके ही पुनीत प्रताप से प्राप्त हुई है... हम मुमुक्षुओं के जीवन में आप का महान उपकार है... सर्वमंगल प्रसंगों में आपका ही महान उपकार है... आप हमारे आत्मोद्धारक हैं.... इसलिये हमारे अंतर में से ध्वनि उठती है कि :—

"स्वस्ति श्री सद्‌गुरवे"

★

चैतन्यभानु का उदय

[वैशाख शुक्ला २]

(१) आज, भव्य जीवरूपी कमलों को विकसित करनेवाले चैतन्यभानु का उदय हुआ...

(२) सूर्य उदित होकर रात्रि के अंधकार का नाश करे, उससे पूर्व तो अज्ञान अंधकार का नाश करनेवाले चैतन्यभानु का उदय हुआ....

(३) भव्यजीवों के संसार-समुद्र को सुखा देनेवाले उग्र चैतनय भानु का उदय हुआ....

(४) अज्ञान-अंधकार में भटकनेवाले जीवों को मुक्तिमार्ग के प्रकाशक चैतन्यभानु का उदय हुआ....

(५) जैन शासनरूपी आकाश में एक जगमगाते हुए चैतन्य भानु का उदय हुआ...

हे साधर्मी बंधुओ....!

(१) चलो! उस चैतन्यभानु की दिव्य किरणों को झेलकर आत्मकमल को विकसाएँ....

(२) चलो! उस चैतन्यभानु के दिव्य तेज को झेलकर अज्ञान-अंधकार को मिटाएँ...

(३) चलो! उस चैतन्यभानु के दिव्य प्रताप को झलेकर भवसमुद्र को सुखा दें...

(४) चलो! उस चैतन्यभानु के दिव्य प्रकाश में मुक्तिमार्ग पर गमन करें....

(५) चलो! उस चैतन्य भानु से जैनशासन को दीप्त करें....

प... ह.... ले

'ज्यां जोउं त्यां नजरे पडतां रागने द्वेष हा! हा!
ज्यां जोउं त्यां श्रवणे पडती पुण्य नु पाप गाथा।
जिज्ञासुने शरणस्थल क्यां? तत्वनी वात क्यां छे?
पूछे कोने पथ पथिक ज्यां आंधळा सर्व पासे।'

अ... ब

'ज्यां जोउं त्यां नजरे पडतो शुद्ध आत्मा ज आहा!
ज्यां जोउं त्यां श्रवणे पहली शुद्ध आत्मानी वार्ता।
जिज्ञासुने शरणस्थल ह्यां, तत्त्वनी वात ह्यां छे,
पूछे आवी पथ पथिक सौ ज्ञानी ओ छेज पासे।'

जिसे आत्मस्वरूप प्राप्त है, प्रगट है उस पुरुष के बिना अन्य कोई उस आत्मस्वरूप का कथन करनेयोग्य नहीं है; और उस पुरुष से आत्मा जाने बिना दूसरा कोई कल्याण का उपाय नहीं है; उस पुरुष से आत्मा जाने बिना ''आत्मा जाना है''—ऐसी कल्पना मुमुक्षु जीव को सर्वथा त्याग कर देना चाहिए।

'आत्मज्ञान समदर्शिता विचरे उदय प्रयोग,
अपूर्व वाणी परमश्रुत, सद्गुरु लक्षण योग्य।'

—परम श्रुत—

''सदा दृष्टि तारी विमल निज चैतन्य नीरखे,
अने ज्ञप्ति मांहि दरव-गुण-पर्याय विकसे;
निजालम्बी भावे परिणति स्वरूपे जई भळे,
निमित्तो वहेवारो चिद्घन विषे कांई न मळे।''

...अपूर्व वाणी...

''अहो! वाणी तारी प्रशमरस भावे नीतरती,
मुमुक्षुने पाती अमृतरस अंजलि भरी भरी;
अनादिनी मूर्च्छा विषतणी त्वराथी उतरती,
विभावेथी थंभी स्वरूप भणी दोड़े परिणति।''

जो जीव आत्मार्थी हो वह क्या करता है ?

'सेवे सद्गुरु चरणने, त्यागी दई निजपक्ष;
पामे ते परमार्थने, निजपदनो ले लक्ष।'

'प्रत्यक्ष सद्गुरु प्राप्तिनो, गणे परम उपकार;
त्रणे योग एकत्वथी वर्ते आज्ञाधार।'

'अहो, अहो! श्री सद्गुरु, करुणासिंधु अपार,
आ पामर पर प्रभु कियो अहो! अहो! उपकार।'

'शुं प्रभु चरण कने धरूँ, आत्माथी सौ हीन;
ते तो प्रभु ने आपियो, वर्तूं चरणाधीन।'

'देह छतां जेनी दशा, वर्ते देहातीत;
ते ज्ञानीना चरणमां हो वंदन अगणित।'

'जिन सत्पुरुषों ने जन्म, जरा, मरण का नाश करनेवाला, स्व-स्वरूप में सहज अवस्थान होने का उपदेश दिया है, उन सत्पुरुषों को अत्यन्त भक्ति से नमस्कार है। उनकी निष्कारण करुणा का नित्यप्रति निरंतर स्तवन करने में भी आत्मस्वभाव प्रगट होता है, ऐसे सर्व सत्पुरुष, उनके चरणारविंद सदैव हृदय में स्थापित रहें।'

तीर्थधाम सोनगढ़ में

जैनधर्म-प्रभावना का भव्य महोत्सव

मानस्तंभ में श्री सीमंधर भगवान की प्रतिष्ठा के पंचकल्याणक

महोत्सव के

पवित्र संस्मरण

पूज्य श्री कानजी स्वामी के प्रवचनों से प्रभावित हुआ; समस्त दिगम्बर जैन समाज और त्यागीवर्ग

मंगलमूर्ति परमप्रभावी सद्गुरुदेव पूज्य श्री कानजी स्वामी के पुनीत प्रताप से जैनधर्म का प्रभाव दिन-प्रतिदिन वृद्धिंगत हो रहा है; जिसके परिणामस्वरूप सोनगढ़ एक तीर्थधाम बन गया है; और उसमें भी भव्य मानस्तंभ का निर्माण होने से तो वहाँ की शोभा में अत्यन्त वृद्धि हो गई है। महाविदेहक्षेत्र में विचरनेवाले गगन विहारी श्री सीमंधरनाथ इस मानस्तंभ में बिराजमान हैं। वास्तव में, महाविदेहक्षेत्र में अपनी दिव्यध्वनि द्वारा श्री सीमंधर भगवान जिसधर्म की प्ररूपणा कर रहे हैं, उसी धर्म का स्तंभ यहाँ पूज्य गुरुदेव ने स्थापित किया है;—ऐसा यह मानस्तंभ सूचित करता है। मानस्तंभ की भव्यता देखकर भक्तजनों को अति आनंद होता है और अंतर में ऐसी ऊर्मि जागृत होती है कि अहो! मानों महाविदेहक्षेत्र से ही एक मानस्तंभ यहाँ आ गया है! और मानस्तंभ में ऊपर विराजमान सीमंधर भगवान को देखने से ऐसा लगता है कि मानों महाविदेह में विचरते हुए सीमंधर भगवान यहाँ से दिखाई दे रहे हों! ऐसे इस पवित्र मानस्तंभ की छाया में आते ही हृदय शांत... शांत ऊर्मियों से विश्रांति प्राप्त करता है।

मानस्तंभ का पूर्व-इतिहास

सोनगढ़ में मानस्तंभ के निर्माण की भावना मुख्य मुख्य भक्तों के हृदय में करीब दस वर्ष से घुल रही थी; संवत् १९९८ में समवशरण की प्रतिष्ठा हुई, तब से यह विचार चल रहा था। गत वर्ष

पौष महीने में मानस्तंभ के निर्माण का निर्णय होने पर, तुरन्त भारतवर्ष के अनेक स्थलों, भक्तजनों ने मानस्तंभ के लिये एक लाख से अधिक का फंड करके उस निर्णय को उमंगपूर्वक अपनाया... और भक्तजनों के अंतर में दस-दस वर्ष से भरी हुई भावना पूर्ण होने का धन्य अवसर आ गया।

श्री बृजलालजी इन्जीनियर आदि के साथ मानस्तंभ का ऑर्डर देने के लिये पवित्रात्मा पूज्य बहिन श्री बहिन संवत् २००८ के फाल्गुन शुक्ला पंचमी के दिन जयपुर पधारीं, और फाल्गुन शुक्ला चतुर्दशी के दिन जयपुर, कारीगर मूलचंदजी रामचंदजी नाठा को मानस्तंभ का ऑर्डर दिया गया....

चैत्र शुक्ला त्रयोदशी के शुभ दिन से मानस्तंभ की नींव डाली गई... और ज्येष्ठ कृष्णा सप्तमी के दिन अत्यन्त उल्लासपूर्वक मानस्तंभ का शिलारोपण हुआ। शिलारोपण के दिन, तथा जब-जब नयी पीठिका के निर्माण का कार्य प्रारम्भ होता था, उससमय मंडल के सभी भक्तजन हाथोंहाथ कार्य करके अपना उल्लास प्रदर्शित करते थे। उस समय भक्तों को मानस्तंभ के पाषाणों के आने के समाचार सुनकर आनन्द फैल जाता था; और छोटे-बड़े प्रत्येक सामान को भक्तजन बहुमानपूर्वक निरख-निरख कर देखते थे। इसी वर्ष के कार्तिक शुक्ला दोज के दिन एक साथ दो वेगन सामान आने के शुभ समाचार मिलते ही अत्यन्त हर्ष हुआ था; और कार्तिक शुक्ला तृतीया के दिन अत्यन्त उल्लासपूर्वक प्रतिमाओं का ग्राम प्रवेश हुआ था, और उसी दिन पूज्य बहिन श्री बहिन के शुभहस्त से मानस्तंभ का प्रथम संगमरमर-पाषाण स्थापित हुआ था। मानस्तंभ में एक बड़ा भारी स्वस्तिकों से शोभित १२५ मन का अखंड पाषाण है; उसे उतारते समय भक्तों के हृदय में जो उल्लास था, वह कभी नहीं भुलाया जा सकता। भगवान की बैठक का प्रथम स्थापन मगसिर शुक्ला प्रतिपदा के दिन हुआ था; पश्चात् शुक्ल चतुर्थी के दिन भगवान की वेदी की स्थापना हुई थी। और उस वेदी को पावन करने के लिये मानों भगवान पधार रहे हों-इसप्रकार ठीक उसी दिन पूज्य गुरुदेव को स्वप्न में भगवान दिखाई दिये। वे भगवान सूर्य समान तेजस्वी और बाहुबलि जैसे भव्य स्फटिक के थे।

एक ओर मानस्तंभ का निर्माण कार्य चल रहा था, और दूसरी ओर मानस्तंभ-प्रतिष्ठा-महोत्सव की विविध तैयारियाँ हो रही थीं। भक्तजन मानस्तंभ के निर्माण-कार्य को भक्तिपूर्वक देखते थे और हर्षित होते थे। कोई कहते थे कि मानस्तंभ तैयार हो जाने पर उसके दर्शन करना वह तो अहो भाग्य है, किन्तु अपनी दृष्टि के सन्मुख मानस्तंभ का निर्माण-कार्य होना भी धन्य भाग्य है!

पश्चात् मानस्तंभ के पाँचवें वेगन के आने में विलम्ब हुआ; उससमय उसकी खोज के लिये जो तार पर तार जा रहे थे, वह प्रसंग भी चिर समय तक याद रहेगा।

बाहर से जो यात्री लोग आते थे, उन्हें पूज्य गुरुदेव मानस्तंभ बतलाते थे; मानस्तंभ क्या वस्तु है, वह समझाते थे, और मानस्तंभ में अंकित मुख्य-मुख्य चित्रों का रहस्य भी कई लोगों को बतलाते थे। कई ग्रामीण लोग देखने आते थे और पूछते थे कि 'यह क्या है?' उससमय पूज्य स्वामीजी उन्हें समझाते थे कि यह "धर्म का स्तंभ है, धर्म का टावर है; धर्म का वैभव है, खुला हुआ जिनमन्दिर है।" ज्यों-ज्यों मानस्तंभ का निर्माण-कार्य समाप्ति पर पहुँचा, त्यों-त्यों उसकी प्रतिष्ठा के शुभ मुहूर्त की भक्तजन आतुरतापूर्वक वाट देखने लगे। चारों ओर के भक्तजन मानस्तंभ का प्रतिष्ठा-महोत्सव देखने को लालायित थे। अनेक चित्र-विचित्र प्रसंगों से मानस्तंभ के इतिहास की रचना होते-होते अन्त में चैत्र शुक्ल दसवीं; बुधवार ता: २५-३-५३ का प्रतिष्ठा-मुहूर्त निश्चित हुआ और हजारों भक्तजनों ने दूर-दूर से आकर अपूर्व उल्लास के साथ वह महोत्सव मनाया। उस महोत्सव का आनंद, उसकी महिमा अद्भुत थी; उसका सर्वांग वर्णन कैसे हो सकता है? वह तो आँखों से देखनेवाले ही जान सकते हैं। यहाँ महोत्सव के मुख्य-मुख्य प्रसंगों के कुछ संस्मरण दिये जाते हैं।

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा-महोत्सव

श्री मण्डप में जिनेन्द्रदेव का पदार्पण : ध्वजा रोपण : सिद्धचक्र विधान-पूजन और जिनेन्द्र-अभिषेक

(चैत्र कृष्णा त्रयोदशी, शुक्रवार से चैत्र शुक्ला दोज, मंगलवार)

प्रतिष्ठा-विधि के प्रारम्भ में सर्व प्रथम प्रतिष्ठा-मण्डप में जिनेन्द्र भगवान को विराजमान करने के लिये रथयात्रा निकाली थी, और प्रभुजी को मण्डप में विराजमान किया गया था, तथा जैन ध्वजारोपण हुआ था। तत्पश्चात् सिद्धचक्र विधान-पूजन और शांतिजाप का प्रारम्भ हुआ था। विविध रंगों से पूरित कलामय सिद्धचक्र-मण्डल अत्यन्त सुशोभित था। इस मण्डल के मध्य में भगवान की स्थापना और चौगिर्द आठ कोठे होते हैं। प्रथम कोठे में सिद्ध भगवान के आठ गुणों

की स्थापना होती है और पश्चात् क्रमशः दुगुने करते-करते अंतिम कोठे में १०२४ गुणों की स्थापना होती है; और उस प्रत्येक गुण की पूजन की जाती है। सिद्धचक्र पूजा अध्यात्मभावों से ओतप्रोत थी; और यहाँ (सोनगढ़ में) प्रथम बार होने से अत्यन्त उल्लासपूर्वक की गई थी। यह पूजा पाँच दिन तक चलती रही; और पाँचवें दिन १०२४ गुणों की पूजा एकसाथ अखण्डरूप से उत्साहपूर्वक पूर्ण की गई थी। मंगलवार के दिन इस सिद्धचक्र विधान की पूर्णता के उपलक्ष में अत्यन्त भक्तिपूर्वक १०८ कलशों द्वारा जिनेन्द्र भगवान का महा अभिषेक किया गया था। देहली से आयी हुई सोने-चाँदी की कलामय गंधकुटी पर विराजमान जिनेन्द्रदेव के अभिषेक का दृश्य अति आकर्षक और भक्तिपूर्ण था। सिद्धचक्र पूजन तथा अभिषेक के प्रसंग पर पूज्य गुरुदेव भी उपस्थित थे।

इन्द्र-प्रतिष्ठा : यागमण्डल विधान :
गर्भकल्याणक की पूर्व क्रिया
(चैत्र शुक्ला पंचमी, गुरुवार)

प्रातः काल इन्द्र-प्रतिष्ठा हुई। इन्द्र बनने के लिये बोली, बोली गई थी; उसमें प्रथम बोलकर कलकत्ता वाले श्री सेठ वच्छराजजी तथा उनकी धर्मपत्नी मनफूलादेवी सौधर्म इन्द्र तथा शची इन्द्राणी बने थे। तदुपरान्त अन्य आठ इन्द्र-इन्द्रानियाँ तथा कुबेर और बलदेव-वासुदेव भी थे। भगवान के माता-पिता रूप में राजकोट वाले श्री सेठ नानालाल जी तथा उनकी धर्मपत्नी जड़ावबेन थीं। इन्द्रों की बोली में लगभग २५०००) की रकम आयी थी।

इन्द्र-प्रतिष्ठा के पश्चात् पंचकल्याणक महोत्सव करने के लिये आचार्य अनुज्ञा की विधि हुई थी; उसमें पूज्य गुरुदेव ने प्रसन्नतापूर्वक अक्षत छिड़ककर आज्ञा दी थी। इस मंगल-आज्ञा के पश्चात् इन्द्रों ने याग्मण्डल विधान-पूजन किया था। याग्मण्डल विधान में तीनों चौबीसियों के तीर्थंकर, वर्तमान में विचरने वाले सीमंधरादि तीर्थंकर तथा पंचपरमेष्ठी भगवन्तों की स्थापना करके उनकी पूजन की जाती है।

आज से पंचकल्याण के दृश्यों का प्रारम्भ हुआ था। रात्रि को श्री नेमिनाथ भगवान के गर्भकल्याणक की पूर्व-क्रिया के दृश्य बतलाये गये थे। सर्व प्रथम मंगलाचरण के रूप में सोनगढ़ के श्राविका-ब्रह्मचर्याश्रम की कुमारिका बहिनों ने नेमिनाथ भगवान की निम्नानुसार स्तुति (गुजराती भाषा में) की थी:—

तारूं जीवन खरूं... तारूं जीवन,
जीवी जाण्युं नेमिनाथे जीवन।
सूतां रे जागता... उठतां-बेसतां,
हैडे रहे तारूं खूब रटन....

इत्यादि स्तुति के पश्चात् स्वर्ग में सौधर्म इन्द्र की सभा का दृश्य बतलाया गया था। भरतक्षेत्र के बाईसवें तीर्थंकर छह मास पश्चात् शिवादेवी माता की कुक्षि में आने वाले हैं—ऐसा अवधिज्ञान से जानकर सौधर्म इन्द्र, कुबेर को सुवर्णमयी नगरी की रचना करने की आज्ञा देता है और छप्पन कुमारिका देवियों को माता की सेवा में भेजता है। देव आकर महाराजा समुद्र विजय तथा महारानी शिवादेवी का सन्मान करते हैं; और श्री ह्री आदि आठ देवियाँ माता की सेवा करती हैं—यह दृश्य हुआ था। इन आठ देवियों के रूप में सोनगढ़ श्राविका-ब्रह्मचर्याश्रम की बाल ब्रह्मचारी बहिनें थीं।

पश्चात्, रात्रि को शिवादेवी माता शयन कर रही हैं; उस समय उन्हें वृषभ, हस्ती, सिंह—इत्यादि १६ स्वप्न आते हैं। माता एक के पश्चात् एक स्वप्न देख रही हैं; वह दृश्य अत्यन्त सुन्दर और आह्लादकारी था। स्वप्नों का दृश्य विशेष ढंग से बतलाया गया था। स्वप्न कहाँ से आते हैं और कहाँ चले जाते हैं उसकी किसी को खबर नहीं पड़ती थी; इसलिये वे स्वप्न वास्तविक स्वप्न मालूम होते थे।

गर्भकल्याणक

(चैत्र शुक्ला षष्टमी, शुक्रवार)

माता ने सोलह स्वप्न देखे। रात्रि पूर्ण हुई। प्रभात होने पर कुमारिका देवियाँ निम्नोक्त मंगल-गीत गाकर माता को जगाती हैं:—

अरहंत सिद्धाचार्य पाठक, साधुपद वंदन करूँ,
निर्मल निजातमगुण मननकर पापताप शमन करूँ;
अब रात्रितम विघटा सकल, ह्यां प्राप्त होत सुकल है,
चहुँ और है भगवान सुमरण, वृक्ष प्रफुलित पात है।
है समय सामायिक मनोहर ध्यान आतम कीजिये,
है कर्मनाशन समय सुन्दर, लाभ निजसुख लीजिये।

माता जागृत होकर प्रथम पंचपरमेष्ठी की स्तुति करती हैं; और पश्चात् अपने मंगलसूचक स्वप्नों का फल जानने के लिये राज-सभा की ओर प्रयाण करती हैं।

दूसरी ओर स्वर्ग में इन्द्रसभा लगी है, और देव गर्भकल्याणक मनाने की तैयारियाँ कर रहे हैं—यह दृश्य हुआ था।

पश्चात् समुद्रविजय महाराज की राजसभा में शिवादेवी माता पधारती हैं, और सोलह स्वप्न कहकर उनका फल पूछती हैं। सोलह स्वप्नों के फल का वर्णन करके महाराज समुद्रविजय कहते हैं कि—हे देवी! तुम्हारे गर्भ में महा प्रतापी श्री नेमिनाथ तीर्थंकर का जीव आया है। यह बात सुनते ही सभा में सर्वत्र आनंद फैल जाता है; इन्द्र-इन्द्राणी आकर वस्त्राभूषणों की भेंट धरते हैं, और स्तुति करते हुए कहते हैं कि, हे रत्नकुक्षिधारिणी देवी! त्रिलोकीनाथ तीर्थंकर आपके गर्भ में पधारे हैं... त्रिलोक के उत्तम रत्न को आपने धारण किया है... आप तीर्थंकर की ही नहीं, किन्तु तीनलोक की माता हैं....

धन्य है धन्य है मात जिननाथ की,
इन्द्र-देवी करें भक्ति भावां थकी;
भेदविज्ञान से आप पर जानतीं,
जैनसिद्धांत का मर्म पहचानतीं,
होत आहार, निहार नहीं धारतीं,
वीर्य अनुपम महा देह विस्तारतीं;
मात शिवा महा मोक्षअधिकारिणी,
पुत्र जनती जिन्हें मोक्ष में धारिणी।

❀ ❀ ❀

शिवादेवी माता की सेवा में उपस्थित देवियाँ, माता को प्रसन्न रखने के लिये अनेक प्रकार से सेवा करती हैं, और प्रश्न पूछती हैं; माता उनके विद्वतापूर्ण उत्तर देती हैं:—

देवी पूछती है, ''हे माता! जगत में सारभूत रत्न कौन-सा है?''

माता कहती हैं: ''हे देवी! सम्यग्दर्शनरूपी रत्न जगत में उत्तम सारभूत है।''

देवी पूछती है: ''हे माता! आप समान उत्तम स्त्री जगत में अन्य कौन हैं?''

माता कहती हैं: ''तीर्थंकर समान पुत्र को जन्म देनेवाली स्त्री जगत में उत्तम हैं।''

दूसरी देवी पूछती है : ''हे माता! कान होने पर भी जगत में बधिर कौन है ?''

माता उत्तर देती हैं : ''जो जैन सिद्धान्त को नहीं सुनता, वह कान होने पर भी बधिर है।''

एक देवी पूछती है : ''हे माता! महान देवेन्द्रादि भी जिसके दास बन जायें—ऐसा उत्कृष्ट पुरुष इस जगत में कौन है ?''

माता उत्तर देती हैं : ''मेरा पुत्र'' अर्थात् तीर्थंकर भगवान।

देवी पूछती है : ''हे माता! जगत में सच्चा सुभट कौन है ?''

माता कहती है : ''विषय-कषायों को जीतनेवाला धर्मात्मा पुरुष ही सुभट है।''

देवी प्रश्न करती है : ''हे माता! आप कहिए कि कौन-सा तपस्वी भव दु:ख सहता है ?''

माता उत्तर देती हैं : ''जो आत्मानुभव के बिना तप करता है, वह भवदु:ख सहता है।''

देवी पूछती है : ''हे माता! जगत में जीव काहे के बिना दु:ख उठाता है ?''

माता कहती हैं : ''रत्नत्रयरूपी धन के बिना अनेक, जीव दु:ख उठाते हैं।''

देवी पुन: प्रश्न करती है : ''हे माता! 'पुरुष' नाम कब सफल होता है ?''

माता तुरन्त उत्तर देती हैं : ''मोक्ष का पुरुषार्थ करे तब।''

देवी पूछती हैं : ''हे माता! किसके बिना नर पशु समान है ?''

माता कहती हैं : ''भेदज्ञानरूपी विद्या के बिना।''

देवी पूछती है : ''हे माता! जगत में कौन-सा कार्य उत्तम है ?''

माता कहती हैं : ''हे देवी! आत्मध्यान ही जगत में परम सुखकारी उत्तम कार्य है।''

—इत्यादि प्रकार से देवियाँ प्रश्न पूछती हैं; और माता हर्षपूर्वक उनके योग्य उत्तर देती हैं। देवियाँ कहती हैं : ''अहो माता! आपके हृदय में तीर्थंकर का वास है... इसलिये आप पूज्य हैं...! ऐसा कहकर पश्चात् ''जय जय मात परम अविकारी''—इत्यादि स्तुति करती हैं। इसप्रकार शुक्रवार के दिन गर्भकल्याणक के दृश्य हुए थे।

❀ ❀ ❀

मानस्तंभ की वेदी तथा कलश और ध्वजशुद्धि

दोपहर के समय मानस्तंभ की वेदी तथा कलश और ध्वजशुद्धि हुई थी। भव्य मानस्तंभ की वेदीशुद्धि पवित्रात्मा पूज्य बहिन श्री बहिन चंपा बहिन और शान्ता बहिन के सुहस्त से कराने के लिय प्रतिष्ठाचार्य पण्डित श्री नाथूलालजी ने कहा कि—''इन दोनों पवित्रात्मा बहिनों के हस्त से

मानस्तंभ की शुद्धि हो, इससे उत्तम और क्या हो सकता है!''—यह सुनकर भक्तजनों को खूब हर्ष हुआ था। पूज्य बहिन श्री बहिन के सुहस्त से प्रथम मानस्तंभ के नीचे के भाग की वेदीशुद्धि हुई थी, और पश्चात् ऊपर के भाग में वेदीशुद्धि के लिये दोनों बहिनें ऊपर पधारी थीं। नीचे खड़े हुए हजारों भक्तजनों की दृष्टि न पहुँचे इतने ऊपर आकाश में अतिशय भक्ति एवं प्रमोद भाव से उन बहिनों ने मानस्तंभ की शुद्धि की थी। उन पवित्र कर कमलों से होनेवाली मानस्तंभ की शुद्धि का दृश्य देखनेवाले भी भक्ति रस में निमग्न होकर पावन हो जाते थे।

जन्मकल्याणक

(चैत्र शुक्ला सप्तमी, शनिवार)

आज भगवान के जन्मकल्याणक का महोत्सव था। शिवादेवी माता की सेवा में रहनेवाली देवियाँ प्रात:काल होते ही भगवान के जन्म की बधाई देती हैं और चारों ओर आनंद-आनंद छा जाता है, इन्द्रों के आसन कम्पायमान होते हैं। अहो! जिनका जन्म होने पर इन्द्रों के आसन कम्पित हो उठें—ऐसा जिनका प्रभाव है... उन तीर्थंकर के जन्मोत्सव की क्या बात! सौधर्म इन्द्र का सिंहासन डगमगने से वह अवधिज्ञान के द्वारा भगवान श्री नेमिनाथ के जन्म का होना जान लेता है; और देवों की सभा में भगवान के जन्मकल्याणक का उत्सव मनाने के लिये आनंद का वातावरण छा जाता है। चारों ओर मंगलनाद होता है; सौधर्म इन्द्र तथा शची इन्द्रणी ऐरावत हाथी पर आकर नगर की तीन प्रदक्षिणा करते हैं, और पश्चात् शची इन्द्राणी, भगवान को तथा माता को निरखते हुए भक्तिपूर्वक स्तुति करती हैं:—

धन्य धन्य नाथ परम सुखकारी, तीनलोक जननी हितकारी,
मंगलकारी पुण्यवती तूं, पुत्रवती शुचि ज्ञानमति तूं।
तब दर्शन से हम सुख पाये, हर्ष हृदय में नाहि समाये,
धन्य धन्य माता हम जाना, देख तुझे अरु श्री भगवान॥

—इसप्रकार स्तुति करके इन्द्राणी बाल भगवान को उठाकर इन्द्र को सौंपती है। अहो! तीर्थंकर भगवान को अपने हाथों में लेने का परम सौभाग्य जिसे प्राप्त हुआ, वह शची इन्द्राणी एकावतारी हो—इसमें क्या आश्चर्य! भगवान को देखकर इन्द्र-इन्द्राणी अत्यंत प्रसन्न होते हैं और ऐरावत हाथी पर बिराजमान करके जन्माभिषेक के लिये मेरु पर्वत पर ले जाते हैं। प्रतिष्ठा-महोत्सव में हाथी भी आया था, जिससे यह सब प्रसंग अति शोभायमान लगते थे। नगर के एक

छोर से दूसरे छोर तक फैले हुए जन्माभिषेक के जलूस का दृश्य अत्यन्त भव्य और महिमावंत लगता था... उस जुलूस के लिये सोनगढ़ नगर एकदम छोटा मालूम होता था। जिस मार्ग से भगवान का हाथी निकलता था, उस मार्ग के दोनों ओर की अट्टालिकाएँ मानव-समुदाय से भर जाती थीं। हाथी पर बिराजमान भगवान को निरख-निरखकर भक्तजन आनंद से नाचते थे और अद्भुत भक्ति करते थे। हाथी भी मानों हर्षित होकर भगवान की भक्ति में सम्मिलित हो गया था। वह बारबार अपनी सूंढ़ में चंवर लेकर इन्द्र के हाथ में देता था। इसप्रकार भगवान की भक्ति करते-करते रथयात्रा मेरु पर्वत पर आ गई। नदी किनारे एक सुन्दर उच्च स्थान पर मेरु पर्वत और पाण्डुकशिला की रचना की गई थी। हाथी ने मेरु पर्वत की तीन प्रदक्षिणाएँ दीं और पश्चात् जय जयकार के बीच उल्लासपूर्वक तीर्थंकर भगवान का जन्माभिषेक हुआ। जन्माभिषेक का भव्य दृश्य तीर्थंकर भगवान की अपरंपार महिमा दर्शाता था कि —अहो धन्य इनका अवतार! इन भगवान के आत्मा ने जन्म पूरे कर लिये हैं; अब पुनः इस संसार में इनका अवतार नहीं होगा। यह एक अन्तिम जन्म था, इसे पूर्ण करके भगवान के आत्मा ने जन्म पूरे कर लिये हैं। अब भगवान भवरहित हो गये हैं... अपूर्व आत्मदर्शन के प्रताप से भगवान के भव का अन्त आ गया। अहो! अनेकानेक भव्य जीवों का उद्धार करनेवाले—ऐसे भगवान का जन्मोत्सव इन्द्रादिक मनाएँ इसमें क्या आश्चर्य! यथार्थ ही कहा है कि—

'घटे द्रव्य जगदीश अवतार ऐसो, कहो भाव जगदीश अवतार कैसो?

—इस ऊर्ध्वगामी आत्मा का जन्माभिषेक मेरु जैसे ऊर्ध्वस्थान पर ही क्यों न हो? मनुष्य लोक का सबसे ऊर्ध्व स्थान यानी मेरु पर्वत... और सबसे उत्तम मनुष्य यानी तीर्थंकर। उन उत्तम पुरुष का अभिषेक उत्तम स्थान पर ऊर्ध्वलोक के उत्तम आत्मा (इन्द्र) द्वारा हुआ, अहो! धन्य है यह प्रसंग! तीर्थंकर प्रभु के साक्षात् जन्माभिषेक की तो बात ही क्या? परन्तु वहाँ भगवान के जन्माभिषेक का पावन दृश्य देखना भी महान सौभाग्य था... मानों वहाँ भी साक्षात् तीर्थंकर विद्यमान हों—ऐसा उस समय का वातावरण था। जय जयकार ध्वनि और भक्ति नृत्य द्वारा उस प्रसंग के उल्लास में अत्यन्त वृद्धि हो रही थी। जिस स्थान पर जन्माभिषेक हुआ, वहाँ की प्राकृतिक शोभा अत्यंत सुन्दर थी। एक ऊँची टेकरी पर मेरु पर्वत की रचना की गई थी, और उसी के निकट से बहने वाली नदी का दृश्य क्षीरसागर जैसा मालूम होता।—इससे जन्माभिषेक के समय का प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त सुशोभित होता था।

जन्माभिषेक के पश्चात् इन्द्राणी ने अतिशय भक्ति और प्रमोदपूर्वक बाल भगवान नेमिकुँवर को दिव्य वस्त्राभूषण पहिनाए और फिर इन्द्र-इन्द्रानी भगवान को हाथी पर बिराजमान करके नगरी में आयें। पश्चात् प्रभुजी की पूजन करके इन्द्र ने ताण्डवनृत्य द्वारा अपना आनंद व्यक्त किया। उस समय के उल्लास और आनंदमय वातावरण में ताण्डवनृत्य के ताल के साथ-साथ भक्तजनों के हृदय भी नाचते थे!

जन्मकल्याणक आदि प्रसंगों पर आकाश में से देवविमान उतरने का दृश्य भी बतलाया जाता था।

पालना-झूलन

दोपहर को बाल भगवान श्री नेमिकुँवर के पालना-झूलन का दृश्य हुआ था। भक्तजन भक्तिपूर्वक भगवान का पालना झुला रहे थे। चारों ओर दीपकों के प्रकाश से शोभायमान सोने-चाँदी के पालने में प्रसन्नमुद्रा में प्रभुजी झूल रहे थे। उन बालभगवान को निरखते ही हृदय स्नेह और भक्ति से छलक उठता था... और ऐसा लगता था कि अहो! भगवान होने के लिये इस बालक का अवतार है... धन्य है इस अवतार तो! यह बालक बड़ा होकर मुनि होगा और आत्मानंद में झूलते-झूलते केवलज्ञान प्रगट करके अनेक भव्यजीवों को भवसमुद्र से पार करेगा!—ऐसे प्रभुजी के पालन को पूज्य बहिन श्री बहिन जैसी पवित्रात्मा जब हृदय की उमंग से वात्सल्यपूर्वक झूला रही थीं, उस समय ऐसा मालूम होता था मानों तीर्थंकर प्रभु की माता ही उन्हें अपने हाथों झूला रही हों!—उस पावन दृश्य को देखकर ऐसा लगता था कि अहो! तीर्थंकर की महिमा की तो क्या बात? परन्तु जो हाथ तीर्थंकर भगवान का पालना झूला रहे हैं, उन हाथों को भी धन्य है!

❀ ❀ ❀

विवाह की तैयारी

रात्रि के समय महाराज समुद्रविजय की राजसभा का दृश्य हुआ था। सब कुटुम्बीजन राजदरबार में बैठे हैं और अपने हरिवंश में भगवान श्री नेमिनाथ का जन्म हुआ, उस सम्बन्ध में हर्ष मना रहे हैं कि—अहो! पहले जिस कुल में शांतिनाथ भगवान आदि तीर्थंकरों ने जन्म लिया था, उसी कुल में आज भगवान नेमिनाथ ने जन्म लेकर हमारे कुल को पावन कर दिया है।

तत्पश्चात्—यादवकुमार वसंतोत्सव मना रहे हैं—यह दृश्य हुआ था; उसमें नेमिकुमार भी साथ थे। वसंतोत्सव की क्रीड़ा के पश्चात् नेमिकुमार अपने बड़े भाई श्रीकृष्ण की रानी रुक्मिणी से

एक वस्त्र धोने को कहते हैं; रानी इन्कार करती हैं और कहती हैं कि—तुम में मेरे पति कृष्ण जितना बल नहीं है। यह उत्तर सुनकर भगवान नेमिनाथ अपने बल का परिचय देने के लिये कृष्ण की नागशय्या पर सोना और नाक के स्वर से शंख बजाना इत्यादि कार्य करते हैं। उनका दिव्यबल देखकर कृष्ण को चिंता हो जाती है और वे ऐसी युक्ति रचते हैं जिससे भगवान नेमिनाथ को वैराग्य उत्पन्न हो और वे दीक्षा ग्रहण कर लें। कुमारी राजुल के साथ नेमिकुमार के विवाह की तैयारी होती है और देश-देशान्तरों के राजा-महाराजा भेंट लेकर महाराज समुद्रविजय के दरबार में आते हैं—यह सब दृश्य हुए थे।

विवाह-प्रसंग पर भगवान श्री नेमिकुमार की बरात का दृश्य अत्यन्त भव्य था। देश-देशान्तरों के राजा-महाराजा बरात में जा रहे थे। और श्री नेमिकुमार एक सुशोभित रथ में बिराज रहे थे! सारथी रथ को धीरे-धीरे चला रहा था... इसप्रकार बरात जूनागढ़ की ओर जा रही थी। उस समय रथ में बिराजमान भगवान की धीर गंभीर मुद्रा को देखकर ऐसा आश्चर्य होता था कि—अरे! यह भगवान, राजुल को विवाहने जा रहे हैं या मुक्तिरमणी को!

❀ ❀ ❀

वैराग्य

(चैत्र शुक्ला अष्टमी, रविवार, प्रातःकाल)

भगवान नेमिकुमार की बरात जूनागढ़ नगर के द्वार पर आ गई है। लोग उत्सुकतापूर्वक बरात की शोभा देख रहे हैं... परन्तु बरात की शोभा पूरी देख भी न पाये थे कि नेत्रों के समक्ष एक नया दृश्य उपस्थित हुआ—जिस मार्ग से भगवान का रथ जा रहा है, उसी पर एक ओर पिंजरे में घिरे हुए कुछ पशु करुण पुकार कर रहे थे। पशुओं की पुकार सुनकर नेमिकुमार सारथी से पूछते हैं कि—'अरे सारथी! इन निर्दोष पशुओं को किसलिये घेर रखा है?' सारथी उत्तर देता है कि—'हे नाथ! आप के विवाह-प्रसंग पर इन पशुओं का वध किया जायेगा; इसीलिये इन्हें घेरा गया है।' सारथी की बात सुनकर भगवान एकदम विचार में पड़ जाते हैं कि अरे! मेरे विवाह के निमित्त से इन निर्दोष पशुओं की हिंसा होगी! ऐसा विचार आते ही वे एकदम वैराग्य को प्राप्त होते हैं और कहते हैं कि 'अरे सारथी! रथ को अब एक कदम भी आगे मत बढ़ाना... तुरन्त रथ को पीछे लौटा ले... मैं अब विवाह नहीं करूँगा... मैं तो दीक्षा लेकर संयम को अंगीकार करूँगा!' भगवान की बात सुनकर सारथी एकदम गद्गद् हो जाता है और अश्रुपूर्ण नेत्रों से भगवान से प्रार्थना करता है

कि—'हे नाथ! आप दीक्षा न लें... आप घर वापिस चलें... हे प्रभो! आप के बिना हम घर लौटेंगे और माता शिवादेवी पूछेंगी कि 'मेरे प्यारे नेमिकुमार कहाँ हैं?'—उस समय मैं क्या उत्तर दूँगा! जब मैं कहूँगा कि—'नेमिकुमार दीक्षा लेकर वन में चले गये हैं', उस समय माता शिवादेवी मूर्च्छित होकर धरती पर गिर पड़ेंगी...!'—ऐसा कहते-कहते सारथी स्वयं भी मूर्च्छित होकर भगवान के चरणों में गिर पड़ता है। उस समय का करुण दृश्य देखकर सबके हृदय भर आये थे और नेत्र अश्रुपूर्ण हो गये थे।....तथापि विशेषता तो यह थी कि उस समय भी भगवान नेमिकुमार की मुद्रा अत्यन्त धीरगंभीर थी और वे अपनी वैराग्य भावना में अचल थे। अन्त में जूनागढ़ के राज-प्रांगण में आया हुआ वह रथ लौटकर अदृश्य हो जाता है...

भगवान के वैराग्य का यह प्रसंग अति गंभीर और भव्य था... ऐसा मालूम होता था मानों नेमिनाथ भगवान साक्षात् वैराग्य को प्राप्त हो रहे हों! पशुओं की पुकार का दृश्य दर्शनीय था।

दूर से दिखाई देने वाले भगवान के रथ को लौटता देखकर राजुल को आश्चर्य होता है और उसी समय अपनी सहेलियों के मुँह से नेमिकुमार के वैराग्य के समाचार सुनकर वे स्वयं भी वैराग्य और संयम की भावना भाती हैं। यह प्रसंग पर्दे के पीछे से ही काव्य और संवाद द्वारा दर्शाया गया था। उससमय अत्यन्त भावपूर्ण शैली में एक वैराग्यमय काव्य गाया था; जिसे सुनकर सारी सभा गद्गद् हो गई थी। वह काव्य निम्नानुसार (गुजराती-हिंदी मिश्रित) था:—

ओ... सांवरिया नेमिनाथ, शाने गया गीरनार।
ओ... तीन भुवन के नाथ, शाने गया गीरनार।
शुं रे कुदरतमां रचायुं शुं रे थयो अपराध....
शाने गया गीरनार।
तोरण से रथ फेर स्वामी गीरी गुफा वसनार...
शाने गया गीरनार।
रथडो वाळो... करुणा धारो लहुं संयम तुम साथ
शाने छोड्यो संसार
नाथ निरागी स्वरूप म्हाली मुनीन्द्र पद धरनार
शाने छोड्यो संसार

सहसावन में जाके स्वामी श्रेणी क्षपक चढ़नार
शाने गया वनवास
भव्य अनंत के तारनहारे मुजने तारो दयाल
शाने गया वनवास
धन्य सुअवसर मिला संयम का धरुं संयम प्रभु पास
प्रभु गया गीरनार
यह आभूषण मेरे अंग पर अब न सोहे लगार
प्रभु गया गीरनार
छोडुं शणगार बनुं अर्जिका रहुं चरण संत छांय
प्रभु गया गीरनार

❀ ❀ ❀

दीक्षाकल्याणक

संसार से विरक्त हुए नेमिनाथ भगवान उपशम भाव से अंतर में बारह वैराग्य भावनाओं का चिंतवन कर रहे हैं; वहाँ भगवान के वैराग्य की खबर पड़ते ही लौकांतिक देव आकार भगवान के चरणों में पुष्पाञ्जली अर्पण करके स्तुति करते हैं। (सोनगढ़ के बाल ब्रह्मचारी भाइयों ने लौकांतिक देवों का अभिनय किया था।)

वंदो वंदो परम विरागी त्यागी जिनने रे.....
थाये जिन दिगम्बर मुद्राधारी देव....
नेमिनाथ प्रभुजी तपोवनमां सचरे रे....

❀ ❀ ❀

धन्य तूं... धन्य तूं... धन्य नेमिनाथ तूं....
धन्य हो नाथ वैराग्य उत्तम लहा....
आपको बोलने बल धरें हम नहीं,
मात्र भक्ति करें पाप आवे नहीं....

—इत्यादि प्रकार से स्तुति करके पश्चात् भक्तिपूर्वक वैराग्य संबोधन करते हैं कि—अहो! वैराग्यमूर्ति नेमिनाथ भगवान! विवाह के समय वैराग्य धारण करके आप जगत के समक्ष

वीतरागता का एक भव्य आदर्श उपस्थित कर रहे हैं... आपका अवतार इस संसार के भोगों के हेतु नहीं है, परन्तु आत्मा के मोक्ष के हेतु आपका अवतार है। इस भव, तन और भोग से विरक्त होकर आत्मा के चिदानन्दस्वभाव में पूर्णतया समा जाने के लिये आप जो वैराग्य-चिंतवन कर रहे हैं, उसे हमारी अत्यन्त अनुमोदना है। प्रभो! आपके रोम-रोम में वैराग्य की ध्वनि समा गई है; आपके प्रदेश-प्रदेश में वीतरागभाव उल्लसित हो रहा है। धन्य है प्रभो! आपकी वैराग्यभावना को धन्य है... हे नाथ! आप भगवती दिगम्बर मुनिदशा अंगीकार करके आत्मा के अतीन्द्रिय आनंद में झूलते-झूलते अप्रतिहतभाव से केवलज्ञान प्राप्त करें और हमारे जैसे जीवों के लिये मोक्ष के द्वार खोलें... हमें भी आप जैसा पवित्र वैराग्य-जीवन प्राप्त हो....'

—इस प्रकार लौकांतिक देवों के वैराग्य सम्बोधन के पश्चात् नेमिनाथ भगवान दीक्षा लेने के लिये वन में जाने को तैयार होते हैं। देव दीक्षाकल्याणक मनाने के लिये आते हैं और भगवान को पालकी में बिराजमान करके सहस्राम्रवन में ले जाते हैं—यह दृश्य हुआ था। दीक्षा कल्याणक के समय भगवान की वनयात्रा का दृश्य भी अद्भुत था। सैकड़ों आम्रवृक्षों की घटा वाले एक सुंदर वन में दीक्षा विधि हुई थी! उस वन का वातावरण ऐसा था मानों वैराग्य का महा गम्भीर सागर उमड़ पडा हो। वन में जाकर वैराग्यमूर्ति भगवान ने वस्त्राभूषणादि उतार दियो और पूज्य गुरुदेव ने भगवान का केशलोंच किया। भगवान का केशलोंच करने को खड़े हुए उस समय पूज्य स्वामीजी के रोम-रोम में वैराग्य-रस उमड़ आया था। पहले तो थोड़ी दूर तक अनिमेष दृष्टि से भगवान की वैराग्य मुद्रा को देखते ही रह गये... उस समय चारों ओर का वातावरण वैराग्य से स्तब्ध हो गया था... पश्चात् प्रसन्न मुद्रा से अत्यन्त गंभीर भावपूर्वक पूज्य गुरुदेव ने तीर्थंकर भगवान का केश-लोंच किया—उस समय का वैराग्यप्रेरक दृश्य देखकर मुमुक्षु रोमांचित हो उठते थे और मुख में से 'धन्य... धन्य' के उद्‌गार निकल जाते थे। केशलोंच के पश्चात् सिद्ध भगवन्तों को नमस्कार करके नेमिनाथ मुनिराज आत्मध्यान में लीन हो गये....

—उन्हें नमस्कार हो!

❀ ❀ ❀

भगवान की दीक्षा के पश्चात्, दीक्षावन में ही पूज्य गुरुदेव ने वैराग्य-प्रवचन किया था आज के प्रवचन में पूज्य गुरुदेव पर एक भिन्न ही प्रकार का रंग चढ़ा था... उनके हृदय में से अपूर्व भाव बह रहे थे... गुरुदेव का ज्ञान-समुद्र आज अध्यात्मरस की वीतरागी लहरों से उछल रहा था।

एक तो गिरनार के सहसावन जैसा आम्रवन... दूसरे नेमिनाथ भगवान की दीक्षा का वैराग्य प्रसंग... और उसी में पूज्य गुरुदेव का प्रवचन... फिर क्या कहना! उस समय हजारों श्रोताओं से खचाखच भरे हुए वन को गुरुदेव वैराग्य भावना में झूला रहे थे... प्रवचन के प्रत्येक शब्द में वैराग्य की ध्वनि उठती थी... उसे सुनते ही श्रोताओं के हृदय भी प्रफुल्लित हो उठते थे और ऐसा लगता था जीवन कृतार्थ हुआ... धन्य आज का प्रसंग... और धन्य आज का प्रवचन! उस प्रवचन की झनझनाहट आज भी अनेक भक्तों के हृदय में ज्यों की त्यों भरी है... और प्रवचन के समय की पूज्य गुरुदेव की वैराग्य मस्ती से ओतप्रोत प्रसन्नमुद्रा, इस समय भी नेत्रों के समक्ष तैर रही है। दीक्षावन के उस प्रसंग का यथार्थ ख्याल तो उसी को आ सकता है जिसने अपनी आँखों से देखा होगा।

प्रवचन में जिनेश्वर के मार्ग का स्वरूप, भगवान की मुनिदशा की महिमा और मुनिदशा में प्रवर्तित अद्भुत आनंद का अलौकिक वर्णन सुनकर, दूर-दूर से आये हुए सैकड़ों श्रोताजन आश्चर्यमुग्ध होकर कहते थे कि "अहो! आज तो अपूर्व बात सुनी... ऐसी अद्भुत बात कभी हमारे सुनने में नहीं आई!"

प्रवचन में अत्यन्त भावपूर्वक गुरुदेव के हृदय में से ऐसे उद्गार निकले थे कि—आज तो भगवान के वैराग्य का प्रसंग है। अहो! भगवान के वैराग्य का प्रसंग देखकर तो आँखों में आँसू आ जाते हैं। भगवान नेमिनाथ ने इस सौराष्ट्र में ही दीक्षा ली थी। जहाँ भगवान ने दीक्षा ली थी, वह गिरनार का सहसावन तो यहाँ से ४०-५० कोस दूर है... और भगवान ने तो हजारों वर्ष पहले श्रावण शुक्ला षष्टमी के दिन दीक्षा ली थी, तथा इस समय तो वे भगवान सिद्धालय में विराजमान हैं; परन्तु देखो न! अपने को तो यहीं सहसावन है, आज ही श्रावण शुक्ला षष्टमी है और आज ही यहीं पर भगवान दीक्षा ले रहे हैं। अहो! आज तो ऐसा लग रहा है मानों नेमिनाथ भगवान साक्षात् यहाँ पधारे हों और हमारे सामने ही दीक्षा ले रहे हों...' पूज्य गुरुदेव के यह उद्गार सुनकर हजारों श्रोताजन खूब आनंदित हुए थे और तालियाँ तथा हर्षनाद से वन को गुंजित कर दिया था... ऐसा उल्लासमय वातावरण था मानों साक्षात् भगवान पधारे हों!

प्रवचन के पश्चात् उस वन में ही एक भाई ने सपत्नीक ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा अंगीकार की थी। उस प्रसंग पर प्रतिज्ञा देते हुए गुरुदेव ने कहा था कि यथार्थ व्रत तो सम्यग्दर्शन के बाद पांचवें गुणस्थान में ही होते हैं, परन्तु सम्यग्दर्शन से पूर्व भी कषाय की मंदतारूप ब्रह्मचर्यादि का शुभभाव आता है—उसका निषेध नहीं है। यद्यपि मंदकषाय कहीं धर्म नहीं है, धर्म तो उससे पृथक् वस्तु है;

रागरहित चैतन्यतत्त्व की रुचि और समझ से ही धर्म का प्रारम्भ होता है, और तत्पश्चात् ही श्रावक या मुनिदशा होती है; तथापि विषय-कषायादि के तीव्र पापों को छोड़कर शुभभाव करे, उसका निषेध नहीं होता।

❀ ❀ ❀

दीक्षा लेने के पश्चात् भगवान को तुरन्त ही मन:पर्ययज्ञान प्रगट हुआ... वे वन में विहार कर गये और भक्तजन उस वैराग्य प्रसंग की धुनसहित नगर में लौट आये। भगवान के केशों का इन्द्र ने क्षीर सागररूप से एक कुएँ में विसर्जन कर दिया।

दोपहर को तथा रात्रि को मुनिराज की भक्ति हुई थी। अजमेर की भजन-मण्डली ने ''नेमिकुमार तथा सारथी'' का संवाद और ''राजुल तथा उनके पिता'' का संवाद गायनरूप से सुनाया था।

आहारदान

(चैत्र शुक्ला नवमी, सोमवार)

आज तीर्थंकर भगवान श्री नेमिनाथ मुनिराज के प्रथम आहार का महापवित्र प्रसंग था। प्रभुजी आहार लेने के लिये नगर में पधारे हैं... भक्तजन भावना भाते हुए भगवान की वाट देख रहे हैं कि—'अहो! हमारे आँगन में भगवान पधारें और हम उन्हें भक्तिपूर्वक आहारदान दें.... अहो, धन्य वह अवसर और धन्य वह काल... कि जब मुनि भगवंत के पावन कर कमलों में अपने हाथों से आहारदान दें!' जिस मार्ग से प्रभुजी निकलते हैं, उस मार्ग पर खड़े हुए भक्तजन भगवान को आहार के लिये पड़गाहन करते थे। इसप्रकार विचरते हुए भगवान 'श्राविका ब्रह्मचर्याश्रम' के निकट आये; वहाँ बहिन श्री चंपाबहिन और बहिन शांताबहिन—इत्यादि भक्तजन भावना भाते हुए खड़े थे। अपने द्वार पर भगवान को देखते ही अत्यन्त भक्तिपूर्वक हृदय के उल्लास सहित दोनों बहिनों ने पडगाहन किया—'हे भगवान! नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु! पधारिये... पधारिये... हमारे गृह में पधारिये... हे प्रभो! अत्र तिष्ठ... तिष्ठ... मनशुद्धि-वचनशुद्धि-कायशुद्धि-आहारशुद्धि... हे नाथ! हमारे गृह को पावन कीजिये!'' भगवान वहाँ खड़े हो गये, इसलिये अति प्रसन्नतापूर्वक भगवान को प्रदक्षिणा दीं... अंतर की भक्ति एवं प्रमोद के बल के कारण वे प्रदक्षिणाएँ सहज हो रही थी... भगवान ने गृह में प्रवेश किया, वहाँ एक पवित्र स्थान पर प्रभुजी को विराजमान करके अत्यन्त भावपूर्वक पाद प्रक्षालन, पूजनादि नवधाभक्ति की... और पश्चात् दोनों बहिनों ने हृदय के

उल्लास से अतिशय भक्तिपूर्वक भगवान को आहारदान दिया अहो! वह जीवन का धन्य प्रसंग था... उस पावन प्रसंग को देखते हुए हजारों भक्तजन उसका अनुमोदन कर रहे थे... पूज्य गुरुदेव भी भक्तिपूर्वक आहारदान का प्रसंग देख रहे थे। ''श्राविका-ब्रह्मचर्याश्रम'' में पूज्य बहिनश्री के आँगन में एक भव्य मण्डप में भगवान के आहारदान का प्रसंग हुआ था।

इस शुभ प्रसंग पर विवेचन करते हुए प्रतिष्ठाचार्य पंडित श्री नाथूलालजी ने कहा था कि—'देखो! यह बहुत ही हर्ष का प्रसंग है कि आज द्वारिका नगरी में वरदत्तराय महाराज के यहाँ भगवान नेमिनाथ मुनिराज का प्रथम आहार हो रहा है... और वरदत्तराय की यह दोनों बहिनें बड़ी भक्ति से भगवान को आहारदान दे रही हैं... महाराज की इन दोनों बहिनों ने धर्ममय प्रवृत्ति के लिये अपना सारा जीवन अर्पण कर दिया है...' धन्य है उस प्रसंग को, जहाँ आहार लेनेवाले तो तीर्थंकर भगवान के जैसे उत्कृष्ट पात्र थे और आहार देनेवाला दातार भी महापवित्र आत्मा थे... उत्तम पात्र और उत्तम दातार इन दोनों का सुयोग वहाँ हो गया था... चारों ओर 'अहो दानम्... महादानम्' के हर्षनाद और पुष्पवृष्टि हो रही थी। अहो! उस आहारदान के समय के भावों की क्या बात की जाये। निर्विकल्प अनुभव के समय जिसप्रकार नय-निक्षेप के विकल्प नहीं होते; उसी प्रकार भगवान को आहारदान देते समय अपूर्व भक्ति के उल्लास के कारण भावनिक्षेप और स्थापनानिक्षेप के भेद का विस्मरण हो जाता था और साक्षात् भगवान का आहार हो रहा हो—ऐसा आह्लाद होता था। आज भी, उस धन्य प्रसंग की बात निकलने पर दोनों बहिनें अत्यन्त प्रमोद और उल्लास से गदगद होकर कहती हैं कि—'अहो! हमारी चिर समय की भावना थी, वह पूर्ण हो गई... भगवान को आहार देते समय तो मानों साक्षात् तीर्थंकर भगवान ही हमारे घर पधारे हों-ऐसा लगता था... और सहज ही भाव उल्लसित हो जाते थे... अहो! रत्नत्रय धारक साक्षात् मोक्षमार्ग हमारे गृह आया। हमारे गृह में तीर्थंकर का पदार्पण हुआ... मुनिराज के पवित्र चरणों से हमारा गृह पावन हुआ... भगवान को आहार देने से हमारे कर पवित्र हुए... हजारा जीवन कृतार्थ हुआ... जीवन में क्वचित् ही प्राप्त होता है—ऐसा वह धन्य अवसर था...'

बहिन श्री बहिन के गृह में जब भगवान आत्मध्यान में विराज रहे थे, उस समय पूज्य गुरुदेव भावपूर्वक भगवान को नमस्कार करके उनके सन्मुख बैठ गये... उस समय भगवान के साथ पूज्य गुरुदेव मानों अंतर की कोई गहरी बातें कर रहे हों!—ऐसा दृश्य मालूम होता था। आहारदान में नवधाभक्ति के प्रसंग पर भगवान श्री नेमिनाथ मुनिराज के प्रति गुरुदेव को ऐसा भाव

उल्लसित हो गया था कि भगवान के पवित्र चरणोंदय को भक्तिपूर्वक मस्तक पर चढ़ाया था।

उस भवन में कुछ देर तक रुककर भगवान वन की ओर प्रयाण कर गये थे। अपने गृह में तीर्थंकर भगवान पधारे और भगवान को प्रथम आहारदान देने का महान लाभ प्राप्त हुआ, उसके हर्षोपलक्ष्य में पूज्य बहिन श्री चंपाबहिन तथा पूज्य बहिन श्री शांताबहिन—दोनों ने अपनी-अपनी ओर से उल्लासपूर्वक दान की घोषणा की थी और अन्य भक्तजनों ने भी उसका अनुसरण करके उसी समय हजारों का दान दिया था।

भक्तों के अंतर में इतनी गहरी भावना थी कि तीर्थंकर भगवान ने जहाँ आहार लिया, उसी गृह में पूज्य गुरुदेव भी आहार करे... पूज्य गुरुदेव ने इस प्रार्थना को स्वीकार किया और उनके आहार का पवित्र प्रसंग भी बहिन श्री बहिन के गृह पर हुआ। एक तो भगवान के आहार का प्रसंग, और साथ ही पूज्य गुरुदेव के आहार का प्रसंग... एक साथ ऐसे दो महान लाभों का अपूर्व प्रसंग बने, फिर उल्लास में क्या कमी रहे!! वह अंतर में नहीं समाता था। उस समय उन दोनों बहिनों का उमंग तो वे स्वयं ही जानती हैं... आहार प्रसंग के पश्चात् काफी देर तक होनेवाली असाधारण भक्ति और दूर दूर तक सुनाई देनेवाले जयकार उस उमंग की साक्षी देते थे। जिन्होंने उस पवित्र प्रसंग को अपनी आँखों से देखा होगा, वे उसकी स्मृति से इस समय भी आह्लादित होते होंगे।

आहारदान प्रसंग का काव्य

लिया मुनि ने आहार... जय जयकार... जय जयकार....
नेमिनाथ मुनिराज... जय जयकार... जय जयकार....
स्वर्णनगर द्वारावती प्यारा बना आज है परम सुहाना
बहन-द्वै वरदत्तराय... जय जयकार जय जयकार... लिया०
आहार हुआ नगरी हर्षाई रत्नराशि हरि ने बरसाई
पुलकित हैं नरनार... जय जयकार जय जयकार... लिया०
तीर्थंकर का पावन चरणां हुआ आज यह मंगल घरमां
धन्य मोक्ष बिहारीनाथ... जय जयकार जय जयकार... लिया०
नेमि प्रभू ने लिया आहार सब से प्रथम मंगलकारा
हिरदे हरख न माय... जय जयकार जय जयकार...

लिया मुनि ने आहार... जय जयकार... जय जयकार...
नेमिनाथ मुनिराज.... जय जयकार जय जयकार....

❀ ❀ ❀

अंकन्यास विधि

(सोमवार)

आज दोपहर को प्रतिष्ठावाले जिनबिम्बों पर पूज्य गुरुदेव के परम पवित्र हाथों से अंकन्यास विधि हुई थी। प्रतिष्ठा में यह विधि अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। प्रतिष्ठा में कुल ३२ प्रतिमाएँ थीं; उनमें से श्री सीमंधर भगवान की आठ प्रतिमाएँ मानस्तंभ में विराजमान होनेवाली थीं। जैन शासन के परम प्रभावी गुरुदेवश्री के महामंगल कर कमलों से सुवर्ण शलाका द्वारा उन वीतरागी जिनबिम्बों पर महापवित्रभावों से जब ॐ इत्यादि मंत्राक्षर अंकित हुए थे, उस समय गुरुदेव के पवित्र कर कमलों से होनेवाले इस पावन महाकार्य का पावन दृश्य हजारों भक्तजन अत्यन्त उल्लासपूर्वक देख रहे थे और जय जयकार ध्वनि से अभिनंदन दे रहे थे। दिगम्बर जैन शासन की प्रभावना के जैसे महान कार्य भगवान श्री कुन्दकुन्दाचार्यदेव और नेमिचन्द्राचार्यदेव के शुभहस्तों से हुए, वैसा ही कार्य वर्तमान में कहान गुरुदेव के सुहस्त से दृष्टि सन्मुख हो रहे थे और उन्हें देख-देखकर भक्त उमंगपूर्वक निम्नोक्त काव्य गा रहे थे:—

(तर्ज : महावीरा तेरी धुन में....)
श्री सद्‌गुरु करकमळेथी....
महा मंगळ विधि थाय छे....
महा मंगळ विधि थाय छे....
महा मंगळ विधि थाय छे....
—महा मंगळ विधि थाय है.... श्री०
आ भरतक्षेत्रमांही प्रतिष्ठा स्वर्णे गाजे.... (२)
श्री मानस्तंभ बन्यो छे सुवर्णना मंदिरीये.... श्री०....
श्री जिनवर मुखडा नींरखी गुरुवरनां दीलडा हरखे... (२)
ए पुनित हृदयोमांही श्री जिनवरजी बिराजे... श्री०....
सुवर्णशलाका सोहे श्री गुरुवर कमकमलोमां.... (२)

पुनित अंतर-आतमथी अंकन्यासविधि थाय छे.... श्री०
श्री विदेहक्षेत्रमांहीं सीमंधरनाथ बिराजे... (२)
अभी दृष्टि वरसावे श्री मंगलविधिमांही.... श्री०....
—आ पंच कल्याणकमांही....श्री०....
वीतराग स्वरूप बताव्युं श्री कहान गुरुदेवे.... (२)
जिनवरवैभव बताव्या जिनस्तंभने थंभाबींआ... श्री०....
श्री जिनवर लोचन सोहे गुरुदेवना मनडां मोहे.... (२)
जिनेन्द्र पधार्या द्वारे तुज महिमा अद्भुत आजे... श्री०....

❀ ❀ ❀

सुवर्णधाम में पधारे हुए भगवन्तों पर पूज्य गुरुदेव ने खूब ही भावपूर्वक अंकन्यास किया था; उस समय उनकी मुद्रा अतिशय प्रसन्नता से ओतप्रोत थी। वे पहले थोड़ी देर तक तो भक्तिपूर्वक एकटक भगवान की मुद्रा को निरखते रहते थे... और फिर मानों प्रभुजी की परम उपशांत वीतरागी मुद्रा को देखकर प्रसन्न हुए हों, इसप्रकार अंतरंग उल्लासपूर्वक प्रतिमाजी पर मंत्राक्षर लिखते थे। मंत्राक्षर लिखने के पश्चात् पुनः भगवान की मुद्रा को एकाग्रता से देखते रह जाते थे... उस समय ऐसा लगता था मानों पूज्य गुरुदेव के हृदय से—'अहो! मेरे सीमंधरनाथ... पधारो... पधारो... पधारो!'—ऐसी ध्वनि उठ रही हो। इसप्रकार प्रतिमाजी को पुनः पुनः निरखते जाते थे; और मंत्राक्षर करते जाते थे।—इसप्रकार अंकन्यास विधि करके पधारे उस समय गुरुदेव अति प्रसन्नतापूर्वक हर्षित होते थे।—महाविदेही सीमंधर भगवान वहाँ पधारते हों, उस समय गुरुदेव के हृदय में हर्ष कैसे समाता?

❀ ❀ ❀

केवलज्ञान-कल्याणक

(चैत्र शुक्ला नवमीं, सोमवार दोपहर)

अंकन्यास विधि के पश्चात् पूज्य गुरुदेवश्री का प्रवचन चल रहा था कि—'हे चिदानंदनाथ! केवलज्ञान होने का सामर्थ्य तेरी अंतरशक्ति में भरा है; उसमें अन्तर्मुख होकर प्रतीति और एकाग्रता करने से केवलज्ञान प्रगट हो जायेगा—इत्यादि बातें चल रही थीं और श्रोतागण सुनने में एकाग्र थे, कि यकायक आश्चर्यजनक कोलाहल मच गया, और चारों दिशाओं में मंगलनाद

होने लगा! अभी वह कोलाहल शांत न हो पाया था कि सन्मुख भगवान का समवशरण दिखाई दिया और ज्ञात हुआ कि अहो! नेमिनाथ भगवान को केवलज्ञान हो गया। उस प्रसंग पर समवशरण की सुन्दर रचना हुई थी। विविध प्रकार की रंगबिरंगी रचनाओं से सुशोभित समवशरण के मध्य में गंधकुटी पर भगवान विराजमान थे। भगवान को देखते ही गुरुदेव ने तखत पर से नीचे उतरकर भक्तिपूर्वक नमस्कार किया। भव्य जीवों के समूह भगवान की दिव्यध्वनि सुनने के लिये उत्सुक हो रहे थे... इस प्रसंग पर भगवान की दिव्यध्वनिरूप से पूज्य गुरुदेव ने अपूर्व प्रवचन करते हुए कहा कि—'भगवान का उपदेश धर्मवृद्धि का ही निमित्त है। भगवान ने भूतार्थस्वभाव के ही आश्रय से लाभ होना कहा है। जो जीव शुद्धनय से भूतार्थस्वभाव का आश्रय करके अपने आत्मा में धर्म की वृद्धि करे, वही भगवान की दिव्यध्वनि का सच्चा श्रोता है....'

दिव्यध्वनि का प्रवचन पूर्ण होने के पश्चात् इन्द्रों ने समवशरण में बिराजमान तीर्थंकर भगवान की पूजन की थी।

सायंकाल विद्यार्थियों ने वैराग्य और तत्त्वचर्चा से भरपूर एक संवाद किया था। उसमें, जंगल में ध्यानस्थ मुनिराज को वज्रबाहुकुमार एकटक देखते रह जाते हैं और उस ध्यानस्थदशा की भावना भाते हैं; वहाँ उनका साला उदयसुंदर कहता है कि—''तुम्हें तो मुनि नहीं होना है न!'' यह बात सुनकर वज्रबाहुकुमार वैराग्यपूर्वक दीक्षा अंगीकार करते हैं।—यह प्रसंग मुख्यतया बतलाया गया था।

रात्रि के समय समवशरण में विराजमान श्री नेमिनाथ भगवान की भक्ति सहित प्रदक्षिणा की गई थी। नेमिनाथ भगवान इस सौराष्ट्र देश में ही गिरनार पर्वत पर ही केवलज्ञान को प्राप्त हुए हैं, इसलिये भक्ति में अत्यन्त उल्लासपूर्वक निम्नोक्त ध्वनि बोली गई थी:—

बालब्रह्मचारी जिणंद पदधारी सेवे सुरनर चंदा रे....
गीरनारगीरी पर नेम जिणंदा भेटत टळे भवफंदा रे....
जिणंद पदधारी रागद्वेष निवारी घाति करम क्षयकारी रे...
सहसावने केवळ प्रगटावी कल्याण मंगल जयकारी रे....
इंद्रादिक सूर असंख्य आवे समवसरण बिरचावे रे...
गीरनारगीरी पर नेमि जिणंद की कल्याणक त्रण भूमि रे....

(इत्यादि)

निर्वाण कल्याणक

(चैत्र शुक्ला दसवीं, मंगलवार)

प्रात:काल निर्वाण कल्याणक का दृश्य हुआ था। उस समय गिरनार के सिद्धक्षेत्र की सुन्दर रचना की थी। गिरनार की पाँचवीं टोंक से भगवान श्री नेमिनाथ भगवान परम सिद्धपद को प्राप्त हुए। दूर-दूर के यात्रीगण आकर गिरनारजी की यात्रा कर रहे हैं—यह दृश्य दिखलाया गया था।

तत्पश्चात् पूज्य गुरुदेव का प्रवचन हुआ। भगवान किस प्रकार सिद्धपद को प्राप्त हुए, वह गुरुदेव ने समझाया। गुरुदेव का प्रवचन सुनने के लिये भावनगर के महाराज श्री कृष्णकुमारसिंहजी पधारे थे। प्रवचन समाप्त होने के पश्चात् अपना हर्ष व्यक्त करते हुए आदरपूर्वक उन्होंने पूज्य गुरुदेव से कहा कि—''आज के प्रवचन में तो अकेली मलाई ही परोसी जा रही थी।'' और प्रतिष्ठा महोत्सव की भव्यता देखकर उन्होंने अपना हर्ष व्यक्त किया था। तदुपरान्त बल्लभीपुर (बला) के ठाकुर साहब श्री गंभीरसिंहजी भी पधारे थे और उन्होंने भी पूज्य गुरुदेव के प्रति अपना भक्तिभाव व्यक्त किया था।

पश्चात् प्रतिष्ठित प्रतिमाजी को मानस्तंभ में स्थापित करने की बोली बोली गई थी; उसमें भक्तजनों ने अति उल्लासपूर्वक भाग लिया था। इस प्रसंग पर प्रतिमाजी की स्थापना कलश-ध्वजारोहण तथा रथयात्रा की बोली में लगभग ३४०००) चौंतीस हजार रुपये आये थे।

दोपहर को प्रतिष्ठित भगवन्तों को मानस्तंभ में बिराजमान करने के लिये भक्तजन भक्तिपूर्वक मानस्तंभ के ऊपर ले जा रहे थे। उस समय का अद्‌भुत दृश्य भी देखने योग्य था—मानों भक्तों की भक्ति से प्रसन्न होकर प्रभुजी स्वयं विहार करके मानस्तंभ पर पधार रहे हों!

मानस्तंभ में जिनबिम्ब स्थापन

(चैत्र शुक्ला १० दूसरी : बुधवार, ता. २५-३-५३)

आज प्रात: काल ७.२० से ७.५५ तक के मंगल-मुहूर्त में पवित्र मानस्तंभ में ऊपर तथा नीचे की वेदियों में चारों दिशाओं में विदेहीनाथ श्री सीमंधर भगवान की स्थापना पूज्य गुरुदेवश्री के परम पवित्र कर-कमलों से हुई। गुरुदेव ने भगवान की प्रतिष्ठा अतिशय भावपूर्वक की थी। अपने सुहस्त से प्रभुजी को स्थापित कर रहे थे, उस समय आप अत्यन्त प्रसन्न दिखलाई देते थे... मानों साक्षात् सीमंधर भगवान की यहाँ भेंट हुई हो—उसका आनंद गुरुदेव के हृदय में नहीं समाता था; वे

अत्यन्त हर्षित हो रहे थे। पहले मानस्तंभ के ऊपर के भाग में प्रतिमाजी की स्थापना हुई थी... आकाश में पूज्य गुरुदेव जब भगवान को स्थापित कर रहे थे, उस समय नीचे खड़े हुए हजारों भक्तजन वह पावन दृश्य देखने के लिये अत्यन्त उत्सुक थे... मानस्तंभ के उच्च शिखर पर सब टकटकी लगाकर देख रहे थे... प्रभुजी को विराजमान करके गुरुदेव जब नीचे पधार रहे थे, उस समय जय जयकार पूर्वक भक्तजन उल्लासपूर्वक उन्हें बधाई दे रहे थे। पश्चात् गुरुदेव ने अपने पवित्र कर–कमलों से मानस्तंभ में नीचे के भाग की वेदियों में प्रभुजी की स्थापना की। प्रभुजी को स्थापित करके तुरन्त अति आनंदपूर्वक वे भगवान के निकट ही बैठ जाते थे... सीमंधर भगवान के साथ गुरुदेव के मिलन का वह पावन दृश्य भक्तजन आश्चर्यपूर्वक देखते जाते थे।

—इसप्रकार पूज्य श्री कानजी स्वामी के परम प्रताप से सुवर्णपुरी के उन्नत मानस्तंभ में महा मंगल महोत्सवपूर्वक सीमंधर भगवान की प्रतिष्ठा हुई... मानस्तंभ में विराजमान सीमंधर भगवान को अत्यन्त भक्तिपूर्वक नमस्कार हो... जिनकी गहरीभक्ति के प्रभाव से भगवान भरत में पधारे उन संतों को नमस्कार हो!

❀ ❀ ❀

भगवान की स्थापना होने के पश्चात् मानस्तंभ में बिराजमान सीमंधर भगवान की खूब भक्तिभाव से पूजन और महाभिषेक भी किया गया था... खूब ऊपर आकाश में होनेवाला वह अभिषेक देखने से ऐसा लगता था मानों स्वर्ग से उतरकर आकाश में देव भगवान का अभिषेक कर रहे हों!

तत्पश्चात् शांतियज्ञ के साथ प्रतिष्ठा महोत्सव पूर्ण हुआ था। अत्यन्त आनंदोल्लास और भक्तिपूर्वक धर्म प्रभावना का यह भव्य महोत्सव पूर्ण हुआ, उसके हर्षोपलक्ष्य में अन्त में रथयात्रा निकली थी। उस भव्य रथयात्रा में श्री जिनेन्द्र देव तथा उनके आसपास के भक्ति के दृश्य अद्भुत थे। भगवान के आगे–आगे हाथी पर धर्मध्वज लहरा रहा था और हाथी पर धर्मात्मा विराजमान थे।—इत्यादि पावन दृश्यों की स्मृति आज भी भक्तों के हृदय में आनंद उत्पन्न करती है!

❀ ❀ ❀

आज दोपहर को बालिकाओं ने भक्ति, वैराग्य, और तत्त्वचर्चा से भरपूर एक सुंदर संवाद किया था। उसमें माता कौशल्या, सुमित्रा, केकेयी, सुप्रभा आदि जिनेन्द्रपूजन, भक्ति और तत्त्वचर्चा कर रही हैं। राम, लक्ष्मण, सीता जिनेन्द्र भक्ति और तत्त्वचर्चा पूर्वक वन में विचर रहे हैं; और भरत

की विरह–वेदना; केकेयी माता का पश्चाताप; कौशल्या माता की उदासीनता; नारदजी के मुँह से महाविदेहक्षेत्र के तथा रामचंद्रजी आदि के समाचार; राम आदि का अयोध्या में आगमन और उसीसमय देशभूषण केवली के आगमन के समाचार मिलते ही भरत का दीक्षा के लिये गमन तथा कैकेयी माता का भी दीक्षा के लिये गमन, यह प्रसंग मुख्यतया बतलाये गये थे।

रात्रि को मानस्तंभ के मैदान में भक्ति रखी गई थी।

❀ ❀ ❀

आभार

प्रतिष्ठाविधि कराने के लिये इन्दौर से पंडित नाथूलालजी प्रतिष्ठाचार्य (संहितासूरि, न्यायतीर्थ) पधारे थे, वे बहुत ही सरल प्रकृति और शान्त स्वभावी हैं। उन्होंने शास्त्रोक्त विधि अनुसार प्रतिष्ठा–विधि बहुत अच्छी तरह करायी थी; उसमें हर एक प्रसंग पर संक्षिप्त विवेचन करके समझाते थे और उसमें बारबार पूज्य गुरुदेव के प्रति बहुमान व्यक्त करते थे। पूज्य गुरुदेव के अध्यात्म–प्रवचन सुनने की उन्हें बहुत रुचि थी और गुरुदेव के प्रवचनों की प्रधानता रखकर ही सारा कार्यक्रम बनाते थे। पंडितजी ने किसी भी प्रकार की भेंट का स्वीकार किए बिना इन्दौर से आकर प्रतिष्ठा महोत्सव की सर्व विधि योग्य रीति से करा दी–उसके लिये उनका खूब–खूब आभार माना जाता है। पूज्य गुरुदेव द्वारा होने वाली महान प्रभावना और सौराष्ट्र के दि० जैन समाज का उत्साह देखकर पण्डितजी तथा दूर–दूर से आये हुए भक्तजन खूब आनन्दित हुए थे।

और, अजमेर की भजन–मण्डली पंचकल्याणक–महोत्सव के प्रत्येक प्रसंग पर विविध प्रकार की अद्भुत भक्ति द्वारा सभाजनों को भक्ति में लीन कर देती थी। नृत्यकार भाईश्री मूलचन्दजी जब रोमांचकारी भक्ति करते थे, उस समय सारे वातावरण में भक्ति का उल्लास फैल जाता था। और डॉ. सौभाग्यमलजी दोशी (मंत्री) अपनी कार्य कुशलता से सर्व प्रसंगों को शोभायमान बना देते थे। अजमेर भजन मण्डली के अधिकतर भाई श्रीमंत हैं; मात्र भगवान की भक्ति और प्रभावना के हेतु वे सोनगढ़ आये थे। पूज्य गुरुदेव के प्रवचन सुनकर वे खूब प्रसन्न होते थे। गुरुदेव के प्रति मण्डल को अत्यन्त भक्तिभाव है; इसलिये सोनगढ़ से वापिस जाते समय वे भी भावुकतावश गद्गद् हो गये थे। रथयात्रा के समय अविरतरूप से भगवान के सन्मुख होनेवाली भक्ति, जन्माभिषेक के प्रसंग पर भक्ति की धुन, पालना–झूलन की भक्ति और ''गोदी लेले....'' का आनंदकारी दृश्य; भगवान के वैराग्य प्रसंग पर नेमिकुमार और सारथी का संवाद, आहारदान

प्रसंग की भक्ति तथा मानस्तंभ में प्रतिष्ठा के समय की भक्ति—इत्यादि हर एक प्रसंग पर भक्ति की धुन मचाकर महोत्सव को सुशोभित किया था। उसके लिये अजमेर भजन–मण्डली का भी आभार माना जाता है।

❀ ❀ ❀

गुरुदेव का अपूर्व प्रभाव और महोत्सव की सफलता

सौराष्ट्र में मानस्तंभ–प्रतिष्ठा का यह महोत्सव अपूर्व उल्लासपूर्वक मनाया गया। इस महोत्सव में मात्र सौराष्ट्र के ही नहीं किन्तु देहली और कलकत्ता, मद्रास और मारवाड़, बरमा और अफ्रीका आदि दूर–दूर रहनेवाले भक्तजनों ने भी खूब उल्लास और भक्तिपूर्वक लाभ लिया था। पाँच–छह हजार से भी अधिक लोग एकत्रित हुए थे। अनेक त्यागी और विद्वान भी प्रतिष्ठा–महोत्सव में आये थे और महोत्सव देखकर खूब हर्षित हुए थे। गुरुदेव के अपूर्व आत्मस्पर्शी प्रवचनों से प्रभावित होकर त्यागी–वर्ग ने (जिसमें करीब २० त्यागी थे) गुरुदेव के आभार सूचक एक प्रस्ताव करके सभा में पढ़ा था। महोत्सव के समय बोली इत्यादि में लगभग सवा लाख की आमदनी हुई थी।

प्रतिष्ठा–विधि में विधिनायक श्री नेमिनाथ भगवान थे। सौराष्ट्र में ही गिरनार पर भगवान के तीन कल्याणक हुए हैं; इसलिये सौराष्ट्र की भूमि में सौराष्ट्र के ही भगवान के पंचकल्याणक होने से वे खास उल्लासपूर्वक मनाये गये थे। पंचकल्याणक में जो एक से एक उच्चकोटि के दृश्य हुए, उन्हें तो आँखों से देखनेवाले ही जान सकते हैं। और उसके साथ–साथ पूज्य गुरुदेव के मुख से जो अध्यात्मरस की धार बहती थी, उसका स्वाद तो साक्षात् सुननेवाले ही जान सकते हैं।—उस महान वस्तु को यहाँ उतार ने की सामर्थ्य इस छोटी–सी लेखनी में कहाँ से होगी?

विदेहधाम की शोभा और गुरुदेव का अद्भुत प्रभाव

इन दिनों में सुवर्णपुरी की शोभा अपार थी... बिल्कुल नयी एक नगरी की रचना हो गई थी। चारों ओर भव्य द्वार, बाजार, बिजली की रोशनी और ध्वजापताका आदि से सारी नगरी ऐसी शोभायमान होती थी मानों स्वप्न में कोई सुन्दर नगरी दिखाई देती हो।—उस नगरी का नाम ''विदेहधाम'' था और विदेह की भाँति ही वहाँ सच्चा धर्मकाल प्रवर्तमान था। भिन्न–भिन्न प्रदेशों के त्यागी, विद्वान आदि पाँच–छह हजार से भी अधिक श्रोताओं की सभा में कहीं भी विरोध का

नाम तक नहीं था। इतना विशाल समुदाय होने पर भी गुरुदेव के प्रवचन के समय सारा वातावरण धीर-गंभीर शांतिमय बना रहता था; सब प्रसन्नतापूर्वक प्रवचन सुनने में मुग्ध हो जाते थे और आश्चर्य से डोल उठते थे कि ''अहो! यही वास्तव में समझने की वस्तु है।'' गुरुदेव का प्रवचन सुनने में लोगों को इतना आनंद आता था कि पंचकल्याणक के अनेक कार्यक्रमों में भी प्रवचन सुनने के लिये उत्सुक रहते थे और पूछते थे कि—''स्वामी जी का प्रवचन कब होगा?'' प्रवचन के समय की धर्मसभा का भव्य वातावरण देखकर हृदय प्रफुल्लित हो जाता था कि अहो! गुरुदेव के प्रताप से धर्मकाल वर्त रहा है... सत्य के जिज्ञासु अनेक जीव हैं... अपूर्व आध्यात्मिक तत्त्व का प्रेमपूर्वक श्रवण करनेवाले जिज्ञासु जीवों का वह भव्य मेला उस काल अद्वितीय था... सर्वत्र जैनधर्ममय वातावरण था। अनेक लोग ऐसा कहते थे कि हम तो स्वर्गपुरी में आये हैं; कोई कहते थे—हम धर्मपुरी में आये हैं, तो कोई कहते थे—ऐसा लगता है मानों हम विदेहधाम में आये हों।—इसप्रकार चारों ओर से सब लोगों के मुँह से आनन्द-आनन्द के ही स्वर निकलते थे। वास्तव में—

''कल्याणकाल प्रत्यक्ष प्रभु को लखें जो सुरनर घने,
तिह समय की आनंद महिमा कहत क्यों मुखसों बने?''

—महोत्सव के समय गुरुदेव के प्रवचन भी अद्‌भुत होते थे... प्रवचन में उनके आत्मा की प्रसन्नता व्यक्त होती थी। एक ओर से पंचकल्याणक के भव्य दृश्य भक्ति रस में झूलाते थे और दूसरी ओर गुरुदेव के अद्‌भुत प्रवचन शांत अध्यात्म रस में झुलाते थे—ऐसे अपूर्व सुयोग से मुमुक्षु अपने को धन्य धन्य... समझ रहे थे।

''विदेहधाम में अंतर्गत अन्य अनेक नगरियाँ भी थीं, उनमें सब से सुशोभित ''सीमंधर नगर'' था; सीमंधर नगर में ही भव्य प्रतिष्ठा-मण्डप था और वहाँ अनेक जिनेन्द्र भगवन्त विराजमान थे। इसके अतिरिक्त विजयानगरी, अयोध्यानगरी, सुसीमानगरी, पुण्डरीकिणीनगरी, कुंदकुंदनगर, कहाननगर—आदि से ''विदेह धाम'' खूब शोभायमान होता था।

मानस्तंभ की यात्रा

प्रतिष्ठा के पश्चात् कुछ दिनों तक तो मानस्तंभ की यात्रा करने के लिये भक्तजन खूब उल्लास एवं भक्तिपूर्वक ऊपर आते थे। सामान्य घर की सीढ़ियाँ भी कठिनाई से चढ़ते हों—ऐसे वृद्ध लोग भी अतिशय भक्ति के कारण मानस्तंभ के ऊपर पहुँच जाते थे। मानों तीर्थ की यात्रा करने

के लिये पर्वत पर चढ़ रहे हों—ऐसा मालूम होता था।

कभी-कभी पूज्य गुरुदेव भी मानस्तंभ पर पहुँच जाते हैं। गुरुदेव जब मानस्तंभ पर चढ़ रहे हों, उस समय गिरनार की पाँचवीं टोंक की यात्रा याद आ जाती थी। और जब गुरुदेव ऊपर सीमंधर भगवान के निकट बैठे हों उस समय का शांत वातावरण देखकर भक्तों के हृदय आनंदविभोह हो उठते थे। गुरुदेव को भी वहाँ से नीचे उतरने की इच्छा नहीं होती थी। 'अहो! यह अतिशय उन्नत धर्मस्तंभ देखने से दिन-प्रतिदिन विशेष वृद्धिंगत होता हुआ गुरुदेव का धर्म प्रभाव ऊपर चढ़ रहा है।'

यह मानस्तंभ ६३ फीट ऊँचा है। इस सम्बन्ध में एक बार पूज्य गुरुदेव ने प्रवचन में कहा था कि शलाका पुरुषों की संख्या भी ६३ है और अपना मानस्तंभ भी ६३ फीट ऊँचा है। जिसप्रकार ६३ शलाका पुरुष मोक्ष की छापवाले हैं; वे निकट मोक्षगामी ही होते हैं; उनका दीर्घ संसार नहीं होता, उसीप्रकार यह ६३ फीट ऊँचा मानस्तंभ ऐसा बतलाता है कि यहाँ आकर जो यथार्थ तत्त्वज्ञान को समझ ले, वे जीव भी अल्पकाल में मोक्ष पाते हैं। मानस्तंभ की ऊँचाई और शलाका पुरुषों की संख्या, दोनों का कुदरती मेल हो गया।

कुदरत भी इस महोत्सव में मैत्री रखती हो, इसप्रकार इस महोत्सव के पहले, तथा बाद में दूर सुदूर से हजारों हिंदी यात्रिक सोनगढ़ की यात्रा में आते थे। सोनगढ़ के महोत्सव के कुछ दिन पहले (फा. व. ५) श्रवणबेल गोले में, इन्द्रगिरी पर्वत पर, करीब १००० वर्ष प्राचीन, ५७ फुट ऊँचे भव्य बाहुबली गोमटेश्वर भगवंत का महा मस्तकाभिषेक हुआ था, वहाँ जानेवाले हजारों यात्रिक सोनगढ़ उतरते। उपरांत मोटरबस और ट्रेन द्वारा रोजबरोज सैकड़ों यात्रिक के संघ, आते रहते। और सोनगढ़ यात्रिकों से भरा रहता। महोत्सव के पहले स्पेशल ट्रेन द्वारा कलकत्ते से, सेठ गजराजजी तथा सेठ तोलारामजी (सेठ वच्छराजजी के भाई) अपने पाँच सौ साथी यात्रिकों के साथ आये थे। श्री परसादीलालजी पाटनी भी साथ में थे। इनके अलावा बाबू कामताप्रसादजी; पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार, पं० परमानंदजी, पं० बाबूलालजी जमादार तथा लालराज कृष्णजी, और सेठ छदामीलालजी वगैरह भी आये थे। वे सोनगढ़ के धर्ममय वातावरण से, तथा पूज्य गुरुदेव श्री के समागम से अतिशय प्रभावित हुए। सेठ छदामीलालजी तथा लाला राजकृष्णजी ने विहार के लिये विनंती करते हुए पूज्य गुरुदेव श्री से कहा : ''महाराज! सम्मेदशिखरजी की यात्रा करने के

लिये आप पधारें; तो शिखरजी की यात्रा का संघ निकलने की मेरी भावना है'' इनके अलावा जयपुर, दिल्ही वगैरह तरफ के कई लोग भी गुरुदेव से विहार के लिये विनंती करते थे। सोनगढ़ की यात्रा से भक्तजन अपने को धन्य समझते और एक दूसरों से कहते; कि अन्य सब जगह तो चाहे जाना बने, या न बने, लेकिन सोनगढ़ तो अवश्य आयें। महोत्सव के दरमियान भी कई हिन्दी यात्रिक थे। मारवाड़ी यात्रिकों के लिये 'पुंडरीकिणी नगरी में' खास अलग व्यवस्था की थी। महोत्सव के बाद भी हजारों यात्रिक आये थे, उनमें से कुछ कहते थे 'यहाँ के महोत्सव देखने का सौभाग्य हमें नहीं मिला' कुछ लोग तो सोनगढ़ के संबंध में गलत बातें सुनकर भ्रम में भी पड़ गये थे। किन्तु सोनगढ़ आकर और गुरुदेव से प्रत्यक्ष समागम करके इनकी भ्रमणा दूर हो जाती। और गद्गद् होकर कहते ''यहाँ के संबंध में हमने पहले कुछ और मान लिया था; लेकिन यहाँ आकर के हमने दूसरा ही हाल देखा। अब हमारी भ्रमणा मिट गई।''

अजमेर के भाई श्री हीराचंदजी बोहरा, महोत्सव के दरमियान गुरुदेव के सीधे समागम के बाद का अपना अभिप्राय बताते हुए 'जैन मित्र' में लिखते हैं कि—'यहाँ पर श्री पूज्य कानजी स्वामी के तात्त्विक प्रवचनों में बड़ा ही आनंद आता है। निश्चय और व्यवहार दृष्टि से सम्यक्‌रूप से समझाने की जो सुंदर शैली है; ऐसी अन्यत्र हमारे देखने में नहीं आई। विद्वानों को अवश्य वहाँ जाकर लाभ उठाना चाहिए। दृष्टि प्रधान कथन का निरूपण बहुत तर्कयुक्त एवम् पूर्ण विवेचन के साथ किया जाता है। वहाँ के लोगों की वात्सल्यता, जिनेन्द्रभक्ति, वीतराग धर्म की प्रभावना, जिनवाणी प्रचार की भावना, मंद कषाय प्रवृत्ति, निष्कपटता तथा सोनगढ़ का जिन मंदिर, समवसरण की भव्य रचना, कुन्दकुन्द प्रवचन मंडप आदि सभी बातों के कारण सोनगढ़ तीर्थधाम बन गया है। हमारा तो समाज के सभी धर्मप्रेमी बन्धुओं से अनुरोध है कि एक बार यहाँ अवश्य जावें। ऐसा निराकुल शान्त वातावरण बहुत कम जगह मिलता है।''

इसके अलावा अनेक त्यागी भी आये थे। वे भी बहुत प्रसन्न हुए थे, और कई त्यागी जी कहते हैं कि : ''महाराज! हमको तो यहाँ आ करके सच्ची निधि मिली!'' जैन समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त एक त्यागी कहते थे कि ''ऐसी अपूर्व बात कहीं पर सुनने में नहीं आती; मेरा तो यह ख्याल है कि आज के सभी त्यागी व पंडित लोगों को यहाँ आ करके यह बात सुनने की व समझने की जरूरत है।''

श्री गुरुदेव, प्रत्येक प्रवचन में आत्मा की सच्ची समझ पर खास भार देकर कहते थे कि:—

'मुनिव्रत धार अनंतबार ग्रीवक उपजायो,
पै निज आतमज्ञान बिना सुख लेश न पायो।'

'आत्मा का सच्चा ज्ञान बिना त्याग निकम्मा है' सम्यग्ज्ञान का ऐसा महत्व सुनकर अनेक त्यागी सरलता से कहते थे कि 'महाराज! बात तो आप कहते हैं ऐसी ही है; हमने भी त्याग तो ले लिया किन्तु वस्तु को हम नहीं समझें। ज्ञान के बिना हमने त्याग ले लिया। लेकिन अब क्या करें? तो इनकी उलझन देखकर स्वामीजी वात्सल्यता से समाधान आश्वासन देते थे, पूर्व अनंतकाल में भी नहीं समझ पाये, ऐसी सत्य वस्तु क्या है!' उसको समझने का प्रयत्न जारी रखना—ऐसा कहकर मध्यस्थ होकर, सत्य समझने के प्रयत्नों की बात कहते थे।

इसप्रकार मानस्तंभ महोत्सव दरमियान तथा पूर्व और बाद में अनेक प्रसंग हुए थे। इन दो मासों के समय के बीच करीब बारह हजार यात्रिकों का आगमन हुआ, और प्रत्येक यात्रिक गुरुदेव के धर्म प्रभाव से खूब प्रभावित हुआ। इस तरह यात्रिकों द्वारा, गुरुदेव का परमपावन प्रभाव का सत्संदेश, भारत वर्ष के प्रत्येक कोने पहुँच चुका। और इसप्रकार गुरुदेव द्वारा प्रवर्तित, धर्मप्रभावना में एक महान बाढ़ आई। पूज्य गुरुदेव अब मात्र सोनगढ़ के या सौराष्ट्र के ही नहीं हैं, लेकिन भारत भर के परीक्षा प्रधान दिगम्बर जैन समाज के एक महान विभुति हैं।

❀ ❀ ❀

पूज्य गुरुदेव के महान प्रभाव द्वारा दिनप्रतिदिन शासन की की अभिवृद्धि देखकर पवित्रात्मा श्री भगवती आत्मा बहिन श्री बहिन के अंतर में खूब हर्ष और उल्लास होता है। और अनेकविध मंगलकार्य द्वारा वे भी पूज्य गुरुदेव के शासन को विशेष शोभा दे रही हैं, मानस्तंभ के शुरुआत से प्रतिष्ठा महोत्सव की पूर्णता तक जो छोटे-बड़े समस्त कार्यों में उन्होंने (पूज्य बहिन श्री बहिनजी चंपाबहिन और शान्ता बहिन) जो भावना... प्रेरणा, और जो लगनपूर्वक दिन-रात संभाल ली है; उसका उल्लेख शब्दों द्वारा नहीं हो सकता। उनकी अत्यंत उल्लासवर्धक प्रेरणा से, सब कार्यकरों में अद्भुत शक्ति भरकर, इस महान उत्सव को संपूर्णतया दिपायमान किया है।

मानस्तंभ के कार्य में तथा महोत्सव की तैयारी में अनेक मासों तक, दोनों पवित्र बहिनों की अद्भूत लगनी और अवतरित कार्यशक्ति देखकर आश्चर्य होता था, उनके श्रीमुखों से पंचकल्याणक महोत्सव वगैरह के उल्लासमय संस्मरण सुनना भी एक महान सौभाग्य है।

❀ ❀ ❀

अद्भुत आत्म-वैभवधारक, परम पूज्य श्री कहान गुरुदेव ने धर्म-वैभव को बतलाया... इन गुरुदेव के महान प्रताप से ही यहाँ धर्म स्तंभ स्थापित हुआ... और इन गुरुदेव के प्रभाव से ही आज शासन शोभा दे रहा है। शासन प्रभावक श्री कहान गुरुदेव के प्रताप से स्थापित हुआ यह धर्मस्तंभ, भव्य जीवों को जिनवैभव बतलाता हुआ जयवंत हो... अद्भुत आत्मवैभव के बल से, धर्मस्तंभ स्थापित कर्ता श्री कहान गुरुदेव जयवंत हों!

हे कल्याणमूर्ति गुरुदेव! आप का अद्भुत आत्मवैभव मेरा कल्याण करो!' ❀❀❀

धर्म..... की..... रीति

धर्म कहाँ है और कैसे होता है?

पर में धर्म नहीं है — पर द्वारा धर्म नहीं होता।
शरीर में धर्म नहीं है — शरीर द्वारा धर्म नहीं होता।
पाप में धर्म नहीं है — पाप द्वारा धर्म नहीं होता।
पुण्य में धर्म नहीं है — पुण्य द्वारा धर्म नहीं होता।

पर्याय में धर्म है, परन्तु पर्याय के आश्रय से धर्म नहीं होता। आत्मा के एकरूप ज्ञायकस्वभाव के आधार से पर्याय में धर्म होता है; परन्तु अभेद वस्तु में भेद करके उस भेद के आश्रय से धर्म नहीं होता।

— इसलिये —

यदि तुम्हें धर्म करना हो तो उसकी रीति यह है कि — पर से, शरीर से, पाप से और पुण्य से भिन्न अभेद ज्ञायकस्वभावी अपने आत्मा को पहिचानकर उसका आश्रय करो!

सोनगढ़ में मानस्तंभ महोत्सव के समय पूज्य गुरुदेव श्री के सुहस्त से प्रतिष्ठित हुए श्री जिनबिंबों की यादी

८	श्री	सीमंधर भगवान (मानस्तंभ में विराजमान)	सोनगढ़
१	''	नेमिनाथ भगवान (विधिनायक)...	''
१	''	श्री पार्श्वनाथ भगवान (स्फटिक के)	''
१	''	श्री श्रेयांसनाथ भगवान	बोटाद
१	''	श्री शीतलनाथ भगवान	''
१	''	नेमिनाथ भगवान	मोरबी
१	''	वासुपूज्य भगवान (स्फटिक के)	''
१	''	शांतिनाथ भगवान	बांकानेर
१	''	महावीर भगवान (स्फटिक के)	जूनागढ़
१	''	महावीर भगवान ('')	''
१	''	शांतिनाथ भगवान	उज्जैन
१	''	महावीर भगवान	लाडनू
१	''	सीमंधर भगवान	किशनगढ़
१	''	शांतिनाथ भगवान	उज्जैन
१	''	महावीर भगवान	सहारनपुर
१	''	सुपार्श्वनाथ भगवान	उज्जैन
१	''	बाहुबली भगवान	जबलपुर
१	''	पार्श्वनाथ भगवान	
१	''	आदिनाथ भगवान	
२	''	जिनेन्द्र भगवान (कसोटी के)	फतेहपुर

उपरोक्तानुसार ३२, प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हुई थीं। तदुपरान्त लाडनूवाले वच्छराजजी सेठ ने पूज्य परमागम श्री समयसारजी के मूल सूत्रों, को चाँदी के पत्रों पर अंकित कराके उनकी प्रतिष्ठा कराई थी।

सत्य

आत्मा का सत्य स्वरूप क्या है, वह आचार्यदेव समयसार में समझाते हैं। लोगों को अन्तर का सूक्ष्म तत्त्व महंगा हो गया है; क्योंकि अभी उसकी बात नहीं सुनी है। अनेक बातूनी तो ऐसा बकते हैं कि तत्त्व का कुछ मेल नहीं होता। अंतर की वस्तु को जाने बिना बाह्य बातों के तड़ाके मारते हैं। भाई! तुझे अनंतकाल में सम्यक् वस्तुस्थिति की खबर नहीं पड़ी है; तूने अंतर की जिज्ञासा से सत् का श्रवण नहीं किया है। यह तो ऐसी अपूर्व वस्तु है जो पूर्व अनंतकाल में कभी प्राप्त नहीं हुई है; इसे समझे बिना किसी का कल्याण नहीं हो सकता। कोई कहे कि "आप हमें समझ दें तो आप सच्चे!" लेकिन भाई! ऐसा नहीं हो सकता; कोई अन्य स्वीकार करे तभी सत्य का मूल्यांकन हो, ऐसा सत्य नहीं है। तू भिन्न-स्वतंत्र है; अन्य कोई तुझे नहीं समझा सकता। तेरी तैयारी के बिना अन्य कोई तुझे निमित्त भी नहीं हो सकता। जब जीव अपनी पात्रता से समझे, तब समझने में सामनेवाला निमित्त कहलाता है, और यदि न समझे तो सामनेवाला जीव उसे निमित्त भी नहीं कहलाता। यह तो स्वयं अपना स्वरूप समझकर अपना कल्याण कर लेने की बात है। जगत समझे या न समझे, किन्तु जो सत्य है, वह कभी नहीं पलट सकता। जगत न समझे तो उससे कहीं सत्य पलटकर असत्य नहीं हो जाता। दूसरे न समझें तो उससे कहीं अपना कल्याण नहीं रुक जाता। प्रत्येक जीव स्वतंत्र है, इसलिये दूसरा जीव न समझे और विरोध करे तो भी ज्ञानी को अपनी समझ में शंका नहीं आती।

[समयसार प्रवचन से]

परम पूज्य सद्गुरुदेव श्री कानजी स्वामी के आध्यात्मिक प्रवचनों का
अपूर्व लाभ लेने के लिये निम्नोक्त पुस्तकों की—

अवश्य स्वाध्याय करें

समयसार प्रवचन भाग १	६)
समयसार प्रवचन भाग २	५)
समयसार प्रवचन भाग ३	४)
प्रवचनसार हिंदी (मूल संस्कृत टीका सहित)	५)
आत्मावलोकन	१)
मोक्षमार्ग-प्रकाशक की किरणें	१)
द्वादशानुप्रेक्षा	२)
अध्यात्मपाठसंग्रह	५)
समयसार पद्यानुवाद	)
निमित्तनैमित्तिक संबंध क्या है ?	)
'आत्मधर्म मासिक' वार्षिक मूल्य	३)
आत्मधर्म फाइलें १-२-३-५-६-७ वर्ष	प्रत्येक का ३)
भजनमाला (अजमेर भजन-मण्डली की)	
मूल में भूल	
मुक्ति का मार्ग	
अनुभवप्रकाश	
अष्टपाहुड़	३)
चिद्विलास	१)
दसलक्षणधर्म	)
जैन बालपोथी	)
सम्यक्दर्शन	२)
स्तोत्रत्रयी	)
भेदविज्ञानसार	२)
पंचमेरु पूजन	)

(डाकव्यय अतिरिक्त)

मिलने का पता—
श्री जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट
सोनगढ़ (सौराष्ट्र)

: मुद्रक-प्रकाशक :
श्री जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट सोनगढ़ के लिये
जमनादास माणेकचंद रवाणी, अनेकान्त मुद्रणालय, मोटा आंकड़िया